बाबा की महासमाधि का महत्व

एवं

गुरुपूर्णिमा – संदेश

परम पूज्य श्री एच. एच. बी. वी. नरसिंहम् स्वामी जी

संस्थापक अध्यक्ष

(अखिल भारतीय साई समाज मायलापुर चैन्नई–6000004)

Significance of BABA'S MAHASAMADHI

&

Guru Purnima - Messages

By

H.H. NARASIMHA SWAMI

FOUNDER-PRESIDENT

All India Sai Samaj (Regd.) Mylapore, Chennai -6000004.

अंग्रेजी भाषा की मूल पुस्तकों का

हिंदी – रूपांतरण

अनुवादिका

रीता मलिक

अनुवादिका का आत्म – निवेदन

पाठकगण! इस धरती पर जन्म लेते ही हर जीव मृत्यु की ओर अग्रसर होने लगता है। हमारा उद्देश्य हिंदी भाषा–भाषियों को इस महत्वपूर्ण विषय पर परम पूज्य श्री नरसिंहम् स्वामी जी द्वारा दिये गये महासमाधि एवं गुरु पूर्णिमा संदेशों के गूढ़ सत्य से अवगत कराना है। बाबा जैसे युगावतार पर जन्म एवं मृत्यु लागू नहीं होते; क्योंकि वे शरीर तक सीमित नहीं हैं। वे शरीर की परिधि के बाहर हैं। वे जीवन–पर्यन्त **'जीवन मुक्त'** होकर रहते रहे हैं तथा शरीर छोड़ने के उपरान्त **'विदेह'** होकर रहे हैं। ऐसे संत अपना कार्य बिना शरीर के भी करते रहते हैं। स्वामी जी के ये संदेश हमें सामान्य संतों की महासमाधि का महत्व विस्तारपूर्वक समझाते हैं तथा श्री साई बाबा का विशेष रूप से विवेचन–वर्णन करते हैं, उन्हीं से बाबा का महत्व प्रतिपादित हो जाता है। गुरुपूर्णिमा संदेश गुरुभक्ति एवं गुरु पूजा का महत्व साई भक्तों को दर्शाते हैं। मुझे आशा है कि आप हिंदी भाषी **'साई भक्त' 'साई युग'** के मसीहा परम पूज्य श्री नरसिंहम् स्वामी जी द्वारा रचित व्याख्यानों एवं प्रार्थनाओं से लाभान्वित होंगे तथा बाबा के मार्ग पर अग्रसर होकर अपने जीवन को सार्थक करेंगें।

इन विश्वविख्यात महासमाधि एवं गुरुपूर्णिमा संदेशों को हिन्दी भाषा में अनुवाद करने का परम सौभाग्य मुझे साई सेवक श्री मोतीलाल गुप्ता – संस्थापक अध्यक्ष – शिरडी साई बाबा टेंपल सोसाइटी फरीदाबाद ने प्रदान किया। दिल्ली में साई भक्ति की लौ लगाने वाले परम पूज्य श्री सुरेश चन्द्र गुप्ता जी ने अकथनीय मार्गदर्शन एवं सहयोग प्रदान किया। हिंदी – भाषा के प्रगाढ़ विद्वान डा. कमल सत्यार्थी जी ने भाषा सुधार कार्य के रूप में अपने श्रद्धा–सुमन बाबा को अर्पित किए हैं। बाबा की कृपा से मुझे जो मार्ग दर्शन, प्रोत्साहन, स्नेह एवं सहयोग इन सबसे प्राप्त हुआ है। मैं उसके लिये आजीवन अभारी रहूँगी।

रीता मलिक
अनुवादिका
फोनः 9868855820
ई–मेलः malik.rita2@gmail.com

परम पूज्य श्री बी. वी. नरसिंह्म स्वामी जी

My hunger for Spiritual food.
Was not Satisfied. till I came to Shridi.
At Shirdi I was given more then what I can take.
I had at last discovered my Sadguru.
He is Samarth Sadguru and
I live in constant communoin with him.

H.H. NARSHIMA SWAMIJI

जब तक देखा था नहीं, शिरडी का आकाश;
तुष्ट न थी मन–प्राण की, शुचि आध्यात्मिक प्यास।
यहाँ पहुँच जो–कुछ मिला, था सचमुच अनमोल;
दुर्लभ सतगुरु मिल गए, दिए ज्ञान–पट खोल।
वे समर्थ सद्गुरु परम, हैं पल–पल नित साथ;
मुझ पर है उनका सदा, वरदायक शुभ हाथ।

–कमल सत्यार्थी

लेखक एच. एच. बी. वी. नरसिंहम् स्वामी जी–संक्षिप्त परिचय

पूज्य श्री एच. एच. बी. वी. नरसिंहम् स्वामी जी का जन्म 21 अगस्त, 1874 को कोअम्बतूर ज़िले के एक रूढ़िवादी ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उनका वास्तविक नाम नरसिंहम् अय्यर था। उन्होंने मद्रास लॉ–कॉलेज से वकालत में स्नातक की उपाधि प्राप्त कर सन् 1895 में सेलम् में वकालत का व्यवसाय आरम्भ किया। शीघ्र ही वे एक सफल अधिवक्ता के रूप में प्रसिद्ध हो गए। वे सेलम् को–ऑपरेटिव बैंक तथा सेलम् म्युनिस्पिल कौंसिल के चेयरमैंन रहे और 1914–1920 तक लेजिस्लेटिव कौंसिल के सदस्य भी रहे। वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कार्यकर्ता तथा होम रुल लीग में श्रीमती एनी. बेसेंट के सहयोगी रहे। वे अपनी पत्नी श्रीमती सीतालक्ष्मी तथा दो पुत्रों और तीन पुत्रियों के साथ एक सफल पारिवारिक, राजनीतिक एवं सामाजिक जीवन व्यतीत कर रहे थे,। कई बार कोई विशिष्ट घटना जीवन का कायापलट कर देती है, इसका जीवन्त उदाहरण हैं श्री एच. एच. बी. वी. नरसिंहम् स्वामी। सन् 1921 में अपने ही घर में पितृश्राद्ध करते समय उनका छोटा पुत्र जयराम एवं छोटी पुत्री सावित्री खेलते–खेलते बगीचे के कुएँ में गिर कर डूब गए। इस दुःखद और दर्दनाक घटना के कारण एक समृद्ध जीवन तीव्र विरक्ति में परिवर्तित हो गया। उनकी पत्नी यह आघात न सह पाई; वह सन् 1922 में परलोक सिधार गई। नरसिंहम् अय्यर सहज भाव से सारे पारिवारिक दायित्व निभाकर, उनसे मुक्त हुए। सेलम् में लक्ष्मी–नारायण मंदिर का जीर्णोद्धार कार्य भी पूर्ण करवाकर वह सितम्बर 1925 में बिना धन–सम्पति के खाली हाथ सेलम् छोड, सत्य की खोज में निकल पड़े।

ब्रह्मज्ञान की जिज्ञासा एवं सद्गुरु की तलाश उन्हें कई साधु–सन्तों के आश्रम तक ले गई। उन्होंने लगभग तीन वर्ष महर्षि रमण के सानिध्य में व्यतीत किए। उन पर एक पुस्तक भी लिखकर अंग्रेजी में प्रकाशित की। उस पुस्तक ने महर्षि रमण को विश्व–पटल पर लाकर खड़ा कर दिया। महर्षि रमण की सहमति से ही वे फिर भ्रमण पर निकल पड़े। गोदावरी–तट पर वे कई सन्तों से मिले – जैसे नारायण स्वामी महाराज, मेहर बाबा तथा उपासनी महाराज!

ऐसा कहा जाता है कि उपासनी महाराज के शिष्य मेहर बाबा के प्रेरित करने पर वे 28 अगस्त 1936 को बाबा की समाधि के दर्शन–हेतु, पहली बार शिरडी पहुँचे। बाबा की समाधि के रूप में सर्वशक्तिमान ने मूक वार्तालाप के धाराप्रवाह शक्ति–पात द्वारा अपना साक्षात्कार नरसिंहम् अय्यर को देकर उन्हें निहाल कर दिया। वर्षो से जिस अखंड एवं शुद्ध हृदयी हीरे की तलाश में वे भटक रहे थे, वह उनमें सदा के लिए समा गया। नरसिंहम् अय्यर ने अपना आगामी पूर्ण जीवन शिरडी साई बाबा के प्रचार–प्रसार–कार्य में लगा दिया। जिन्हें आज हम नरसिंहम् स्वामी के नाम से जानते हैं, उन्होंने साई बाबा पर कई पुस्तकें एवं लेख लिखे तथा लगभग 700 भाषण दिए। इस प्रकार उन्होंने सम्पूर्ण दक्षिण भारत में बाबा के नाम की ज्योति प्रज्ज्वलित कर दी। सन् 1941 में उन्होंने **अखिल भारतीय साई समाज** की स्थापना की तथा **साई–सुधा** नामक पत्रिका का प्रकाशन आरंभ किया। वे उसके संस्थापक अध्यक्ष बन गए। स्वामी जी द्वारा लिखित पुस्तकें बिना कॉपी राइट के अखिल भारतीय साई–समाज द्वारा प्रकाशित की गई हैं। **'Life of Sai Baba'** नामक पुस्तक में स्वामी जी ने भक्तों के अनुभवों का विश्वसनीय एवं प्रामाणिक विश्लेषण किया है। इस चिरस्मरणीय पुस्तक में स्वामी जी ने भक्तों से अंतिम आत्मनिवेदन कर **19 अक्टूबर 1956** में महासमाधि ले–ली। स्वामी जी द्वारा बाबा के जीवन की सार–तत्व–युक्त समीक्षा निश्चय ही भक्तों की आने वाली पीढ़ियों के ज्ञान–चक्षु खोलेगी तथा उन्हें साई–भक्ति के सन्मार्ग पर चलने की सद्प्रेरणा देती रहेंगी।

– साई सेवक मोतीलाल गुप्ता

विषय – सूची

1. अनुवादक का आत्मनिवेदन
2. लेखक – परिचय
3. प्रथम महासमाधि संदेश
4. द्वितीय महासमाधि संदेश
5. तृतीय महासमाधि संदेश
6. चतुर्थ महासमाधि संदेश
7. पाँचवा महासमाधि संदेश
8. छठा महासमाधि संदेश
9. सातवाँ महासमाधि संदेश
10. आठवाँ महासमाधि संदेश
11. नौवाँ महासमाधि संदेश
12. दसवाँ महासमाधि संदेश
13. प्रथम गुरुपूर्णिमा संदेश
14. द्वितीय गुरुपूर्णिमा संदेश
15. तृतीय गुरुपूर्णिमा संदेश
16. चतुर्थ गुरुपूर्णिमा संदेश
17. पाँचवा गुरुपूर्णिमा संदेश
18. छठा गुरुपूर्णिमा संदेश
19. बाबा के अमृत–वचन

प्रथम महासमाधि संदेश

दशहरे के अवसर पर बाबा की महासमाधि पर विचार करने के साथ–साथ यह उचित होगा कि हम मृत्यु के अभिप्राय एवं महत्व पर भी विचार करें। मृत्यु के भय से बहुत लोग भयभीत रहते हैं तथा कुछ ही लोग इस विषय पर कुछ सुनना–समझना चाहते हैं। वे इसे अमांगलिक समझते हैं। इसके विचार से भी वे पीछा छुड़ाना चाहते हैं तथा इस पर कोई विचार–विमर्श भी करना नहीं चाहते, परन्तु जब वे इस सत्य का दृढ़तापूर्वक सामना करते हैं, तब मृत्यु एक दहशत न रहकर, उनके लिए विकास–संस्कार एवं संवर्धन की अनिवार्य विरासत बन जाती है। उन्हें लगता है कि जीवन एवं मृत्यु एक ही सत्य के दो अनिवार्य पहलू हैं; मशीन के दो हिस्से हैं। जीवन–शक्ति के प्रगति–क्रम में पूर्वगामी स्वरूप एवं उसके पश्चात् उसके उत्तराधिकारी स्वरूप का क्रमिक उत्पति द्वारा स्थान ग्रहण करना हैं। परिवर्तन सृष्टि का सार है; प्रकृति का नियम है। परिर्वतन ही मृत्यु का एक और नाम है। जब कोई व्यक्ति मृत्यु को परिवर्तन समझकर स्वीकार करता है, तब वह निर्भीक, साहसी और ज्ञानवान बनकर उसका आलिंगन करता है। प्रत्येक जीव–जन्तु, प्रकृति का हर कण, चेतन तथा अचेतन – हर क्षण परिवर्तित हो रहें हैं। यह हर जीव–जन्तु एवं वनस्पति को आनन्द–रूप प्रदान करने वाला है। प्रकृति के आदेश को आत्मसात करने के पश्चात् मृत्यु परिर्वतन बनकर मनुष्य की अनिवार्य उपलब्धि के रूप में उसके लिए एक गौरव का विषय बन जाती है तथा मनुष्य को दृड़तापूर्वक जिन्दगी का सामना करने की हिम्मत जुटाती है। बाबा के वचनों पर ध्यान देनें एवं मृत्यु – सम्बंधी उनके विचारों का मूल्यांकन करने पर स्पष्ट होता है कि वह, सर्वव्यापी एकाकार, विश्व के हर प्राणी में व्याप्त है तथा देहधारी पुरुष **'शिरडी साई बाबा'** के रूप में जाने जाते हैं। **'शिरडी साई बाबा'** नाम की संज्ञा का अभिमान–रहित प्रयोग करते हुए उन्होंने अनेक लीलाएँ की हैं तथा हर उस व्यक्ति का हृदय–परिर्वतन किया, जो उनके सम्पर्क में आया – कुछ का उसी समय और कुछ का अधिक समय के बाद। यह कथन अधिक स्पष्ट हो जायेगा, जब हम बाबा के वचनों पर ध्यान देंगें, जो कि उन्होंने उस सर्वव्यापी, एकाकार, विश्व के हर प्राणी में व्याप्त ईश्वर के रूप में तथा इसके अतिरिक्त देहधारी पुरूष शिरडी साई बाबा के रूप में व्यक्त किए, उनका मनतव्य एक ही था।

कहा जाता है कि जगतगुरु शंकराचार्य ने भी केवल उतना ही अंहकार अपने पास शेष रखा था, जिससे कि वे **'जगत– गुरु'** के रूप में संसार को उच्च सत्य के उन तत्वों से अवगत करा सकें जो उन्होंने अपने भीतर उतार रखे थे। ठीक इसी प्रकार साई बाबा ने भी

केवल उतना ही अंहकार अपने पास शेष रखा, जिसके द्वारा वे अपनी नाम–रूपी धारणा **'शिरडी साई बाबा'** का प्रयोग करते हुए हजारों भक्तों का उद्धार कर सकें, जो पूर्व जन्मों के ऋणानुबन्धों द्वारा उनसे जुड़े थे। यहाँ ये ऋणानुबन्ध हमें संकेत देते हैं कि बाबा कुछ चुनी हुई जीवात्माओं के साथ कर्तव्य–बंधन के पुराने लेन–देन के कारण अपने को जुड़ा मानते थे, और उनका उद्धार करने के लिए विवश थे। बाबा का साक्षात् अवतार लेकर शरीर–रूप में धारती पर लीला करने का उनका उद्देश्य भी शायद यही था। सोलह वर्ष की तरुणावस्था में वे शिरडी में प्रकट हुए और उन्होंने हजारों भक्तों को अपनी ओर आकर्षित किया। भक्तों ने पुनः इस जन्म में उनके संरक्षण का अनुभव किया तथा पिछले जन्मों में भी निश्चय ही किया होगा। सन् 1886 में समाधि लेने से पहले बाबा ने अपने अन्यतम भक्त महाल्सापति को कहा था कि वह अल्लाह से भेंट करने जा रहे हैं और वह तीन दिन तक शरीर के बाहर रहेंगें। अगर वह तीन दिन तक वापस न लौटें तो उनके शरीर को गोड़ा नीम (मीठी नीम) के नीचे दफना देना, किन्तु यदि वह वापस लौट आएँ तो वे अपने शरीर की हिफाजत स्वयं कर लेंगे। तीन दिन तक बाबा का शरीर शव के रूप में मस्ज़िद में पड़ा रहा। उसके बाद बाबा शरीर में वापस लौट आए और बत्तीस साल तक शिरडी में लीला रचते रहे।

प्रश्न है कि वह कौन–सी विद्या है, जिसके द्वारा आत्मा शरीर छोड़कर तीन दिन के बाद वापस लौट आई? शंकराचार्य का सवाल है, वे अपने मृत शरीर में तीस दिन बाद लौटे थे। सन् 1886 में जब बाबा तीन दिन के लिये शरीर छोड़कर गए थे उस समय सरकारी अफसरों के अनुसार बाबा मृत थे तथा उन्होंने मृत्यु के कारणों की न्यायिक जाँच कर मृत्यु–समीक्षा–रिपोर्ट द्वारा इसकी पुष्टि कर दी थी। यहाँ पर तो अधिकारियों की रिपोर्ट भी गलत पाई गई; क्योंकि बाबा कुछ समय तक मृत थे और वह पुनर्जीवित हो उठे थे। शरीर छोड़ने के बाद आत्मा कहाँ रही, यह एक आश्चर्यजनक पहेली है। यहाँ पर हम **'लजारस'** का उल्लेख करते हैं, जिन्हें **जीसस क्राइस्ट्** ने शरीर छोड़ने के चार दिन बाद पुनर्जीवन दिया था। उनकी बहन ने जब उनसे यह प्रश्न किया, "भाई तुम चार दिन तक कहाँ थे? – तो इसका कोई जवाब दर्ज नहीं किया गया। परन्तु साई बाबा ने इसका जवाब दिया कि वह अल्लाह के चरणों में थे। साई बाबा जैसी महान आत्माओं के पास शक्तियाँ होती हैं, जिनसे वे जब चाहें तब शरीर छोड़कर दूसरे नए शरीर में प्रवेश कर सकते हैं तथा परमात्मा से एकाकार कर सकते हैं।

भीष्म पितामह को इच्छा–मृत्यु की शक्ति प्राप्त थी। उन्होंने मकर संक्रांति के बाद शरीर छोड़ने का प्रण किया था। ऐसे व्यक्ति विरले ही देखने को मिलते हैं, जो अपनी मृत्यु का समय खुद चुनें। ऐसे व्यक्ति सामान्यतः हर हाल में ईश्वर के साक्षात अवतार अथवा अंश होते हैं। वे मृत्यु के समय पवित्र एवं शुद्ध होते हैं तथा वे इच्छा–मृत्यु का समय खुद तय करते हैं। उनकी इच्छा–शक्ति बहुत विकसित होती है तथा वे जीवन को अंतिम क्षण तक पकड़े रहते हैं।

बाबा जैसे उत्कृष्ट संत के संदर्भ में यही सत्य लागू होता है; क्योंकि उन्होंने अपनी मृत्यु का समय खुद तय कर दिया था। वह जब शिरडी में सशरीर उपस्थित थे, तब भी वह शिरडी के बाहर दूसरे शरीरों द्वारा लीला करते थे। यह एक आश्चर्यजनक पहेली है जो हमें यह सोचने को विवश करती है कि किस प्रकार मृत्यु के दौरान आत्मा एक शरीर छोड़कर दूसरे में प्रवेश करती है। अगर हम जीवित रूप में एक शरीर से दूसरे शरीर में प्रवेश करने लगें तो क्या यह मृत्यु कहलाएगी? साई बाबा यह कार्य दर्जनों बार करते थे। इसका एक उदाहरण देते हैं। एक बार महाल्सापति कावड़–यात्रा पर झेजुरी गए। वहाँ प्लेग का प्रचण्ड प्रकोप था और लोग घबरा गये थे। बाबा अचानक महाल्सापति के सामने झेजुरी में प्रकट हुए और उन्हें प्रोत्साहित किया, साहस दिया कि जब माँ पास हो तो बालक को चिंता करने की आवश्यकता नही। झेजुरी शिरडी से 150 मील दूर है। महाल्सापति कावड़ लेकर आगे गये एवं सकुशल वापस लौट आये। उनपर प्लेग का कोई असर नहीं हुआ। इसी तरह के अनेक प्रसंग अन्य भक्तों के साथ भी घटित हुए हैं।

अब हरदा का उदाहरण लेते हैं – साधुभैया और उनके चार मित्र पैदल चल रहे थे कि अचानक उनको सामने से साई बाबा आते नज़र आए। उन्हें हैरानी हुई। बाबा ठीक उनके सामने आए और साधुभैया के हाथ पर अपना हाथ रख दिया तथा बाद में अन्तर्ध्यान हो गए। उन चार लोगों में से एक संशयवादी प्रवृति के व्यक्ति ने पूछा कि तुम सबने क्या देखा? साधुभैया ने जवाब दिया, "तुम लोग मानो या न मानो पर तुम में से कोई इस बात से इन्कार नहीं कर सकता कि जब मैं तुम लोगों के साथ चला था, तब मेरे हाथ में कुछ नहीं था, परन्तु जब बाबा ने अपना हाथ मेरे हाथ पर रखा तो मुझे लगा कि मेरे हाथ में एक टूथप्रेक है" संशयवादी प्रवृति के व्यक्ति ने कहा कि 'इस बात की पुष्टि की जाए' और उन्होंने शिरडी एक पत्र भेजकर पूछा, क्या बाबा वास्तव में हरदा आए थे और उन्होंने यह टूथप्रेक साधुभैया के हाथ में दिया था? पत्र शिरडी पहुँचा और शामा ने यह सवाल बाबा के सामने रखा। बाबा ने शामा को आदेश दिया कि वह जवाब भेजें तथा साधुभैया को शिरडी बुलाएँ। साधुभैया खुद शिरडी

आए और उन्होंने सारा विवरण बड़े बाबा के सामने ही सबको सुनाया। हर किसी को यकीन हो गया कि बाबा हरदा में साक्षात रूप में प्रकट हुए थे। बड़े बाबा के आँसू बह चले! इस विचार से कि बाबा अपनी मरजी से साक्षात रूप धारण करते हैं तथा अपने आप को खींच लेते हैं, इसे हम आम भाषा में कह सकते हैं कि बाबा क्षण भर में जीवन और मृत्यु की सीमा को पार कर जाते हैं।

अब सवाल उठता है कि जिसे हम जन्म एवं मृत्यु कहते हैं, क्या यह हर्ष या शोक का विषय है? अगर वह ऐसा नहीं है, तो हमें कोई विशेष कारण नज़र नहीं आता कि हम इस बात पर गौर करें कि बाबा धरती पर सशरीर प्रकट हुए और फिर अन्तर्ध्यान हो गए। बाबा ने स्वयं अपने भक्तों को दृढ़ विश्वास दिलाया कि उनकी मृत्यु वास्तविक मृत्यु नहीं है।

बाबा की महासमाधि के दौरान श्रीमती एम. डब्बलू प्रधान ने स्वप्न देखा कि बाबा की मृत्यु हो रही है। वह चिल्लाई – "बाबा की मृत्यु हो गई है।" बाबा ने स्वप्न में उसे टोका, **'संत कभी नहीं मरते।'** उनके संदर्भ में जो शब्द प्रयोग करते हैं, वे हैं कि संत **'समाधि'** प्राप्त करते हैं। अनेक भक्तों को डर था कि बाबा शरीर छोड़ने के बाद भक्तों को निराश्रित छोड़ देंगें। बाबा ने बम्बई की एक महिला भक्त को कहा था, **"माँ, मैं कभी नहीं मरुँगा। तुम कहीं भी रहो, जब भी तुम मेरा ध्यान करोगी, मैं तुम्हारे पास रहूँगा – किसी भी समय, चाहे मैं इस शरीर में रहूँ या न रहूँ।"** बाबा ने दामोदर रसाने को भी यही आश्वासन दिया था। श्री रसाने ने श्री बी. वी. एन. स्वामी जी को बताया कि सन् 1918 में बाबा की महासमाधि के पश्चात्, उन्होंने स्वयं बाबा को सशरीर अपनी इन्हीं आँखों द्वारा कई बार घूमते–फिरते देखा और बाबा से बातचीत भी की है। क्या यह सब बाबा के नित्य–शाश्वत और निरंतर विद्यमान होने के प्रमाण नहीं हैं? इससे ज्यादा प्रमाण एवं सबूतों की कल्पना नहीं की जा सकती। इस प्रकार के प्रसंग केवल उन जैसे लोगों तक ही सीमित नहीं हैं जो बाबा से सन् 1918 में महासमाधि से पहले मिल चुके थे, बल्कि वे लोग इनमें भी शामिल हैं, जिनका जन्म सन् 1918 के बाद हुआ है।

मद्रास में छोटे–छोटे बच्चों ने बाबा को देखा और उन्होंने अपने माथे पर बाबा से उदी लगवाई तथा बुखार आदि व्याधियों से छुटकारा पाया। एक वृद्ध महिला ने अभी हाल में ही बाबा का नाम सुना और वह अकसर उनके दर्शन करती हैं। यहाँ तो हमने केवल कुछ ही का ज़िक्र किया है, परन्तु ऐसे अनेक प्रसंग हैं जो यह सिद्ध करते हैं कि आज भी, बाबा शरीर छोड़ने पर भी मरे नहीं हैं। यहाँ यह तर्क इसलिये दिया जा रहा है, क्योंकि यह केवल उन

लोगों के लिये आवश्यक है जो यह संपूर्ण रूप से स्वीकार नहीं करते कि जीवात्मा की मृत्यु नहीं होती और जीव की यात्रा मृत्युप्रांत भी जारी रहती है। या फिर हम यह कह सकते हैं कि आत्मा अमर है, वह कभी नहीं मरती।

बहुत समय पूर्व सनथ कुमार ने अपने ग्रंथ 'सनाथसुजाथ्य' में कहा था कि मृत्यु नाम की कोई अवस्था नहीं है, जैसे कि जीवन्त जीव का लुप्त होना। साधारण जन–मानस द्वारा इस पुरातन सत्य की उपेक्षा करने की वजह से आज विशाल मात्रा में जनसाधारण अपनी एवं अपने निकटतम प्रिय सम्बंधियों की मृत्यु के भय से आतंकित एवं आशंकित रहते हैं। एक आम इन्सान की जिन्दगी को थोड़ा समझ पाना भी मुश्किल प्रतीत होता है और यह सवाल तो विचारकों एवं दार्शनिकों के लिये एक विशेष पहेली युग–युग से बना हुआ है। बध्रनायक उपनिषद् में याज्ञवल्क्य ने प्रश्न आमंत्रित किये एवं उनका जवाब देने की जिम्मेदारी ली। अर्थभागा ने उनसे एक सवाल किया – "जब शरीर की मृत्यु होती है तब आत्मा की क्या दशा होती है?" याग्यवल्क्य ने इस सवाल का प्रकट रूप में जवाब देने के बजाय, एक किनारे ले–जाकर इस विषय को गोपनीय विचार–विमर्श–हेतु छोड़ दिया और कहा कि इस विषय पर ज्ञान सीमित है तथा इसे सही प्रकार समझा नहीं गया है। इसलिये यह गोपनीय विषय है। उन्होंने आगे समझाया कि आत्मा की यात्रा भौतिक जीवन के बाद जारी रहती है और भली आत्माओं को उनके सत्कर्मो के शुभ फल प्राप्त होते हैं तथा बुरी एवं दुष्ट आत्माओं को उनकी दुष्टता की सजा मृत्यु के पश्चात् भुगतनी पड़ती है।

ठीक इसी प्रकार कठोपनिषद्, के समय नचिकेताओं की प्रथा के अनुसार, नचिकेता यम के पास गए और उन्होंने तीन वरदान प्राप्त किये। इनमें सबसे महत्वपूर्ण एवं उत्कृष्ट प्रश्न जो उन्होंने मृत्यु के देवता यम से किया, वह था कि मृत्यु के बाद क्या है? मृत्यु क्या प्रक्रिया है? मृत्यु का स्वरूप एवंविधि क्या है? क्या यह जीवन का अंत है? या फिर जीवन काल के पश्चात् भी कुछ और है? मृत्यु के पश्चात् भी क्या कुछ शेष रहता है? अगर है तो उसका स्वरूप क्या है? यमराज ने विनती की कि नचिकेता उन्हें इस प्रश्न का उत्तर देने के लिये विवश न करें, क्योंकि इस प्रश्न के उत्तर में अन्य देवी–देवताओं को भी संदेह बना रहता है। यह विषय पेचीदा, जटिल, रहस्यमय तथा दुविधा उत्पन्न करने वाला है। नचिकेता ने ज़ोर दिया कि यमराज उसे जवाब दें। यमराज ने घोषणा की कि वह तो केवल शिष्य नचिकेता की आंतरिक हार्दिक जिज्ञासा एवं गंभीरता की परीक्षा ले रहे थे। शिष्य को उपयुक्त एवं सुपात्र जानकर यमराज ने बताया कि इस प्रश्न के साथ कई और महत्वपूर्ण प्रश्न खड़े हो जाते हैं, जैसे कि समस्त दृश्यमान जगत एवं समस्त इंद्रियग्राह्य विषय ज्यों–ज्यों हमें दिखाई देते हैं,

प्रकट एवं अप्रकट होते हैं, तथा नित्य प्रतीत होते हैं, क्या यह स्थायी हैं? या फिर अस्थायी एवं अनित्य हैं? अगर ऐसा है तो फिर क्या वे अपने पीछे या फिर आगे कोई वास्तविकता छोड़ते हैं? महत्व इस प्रश्न का यह है कि इसे क्या केवल एक सवाल ही समझा जाए, जिसका जिक्र शरीर की मृत्यु के बाद आत्मा की स्थिति से है, उन्होंने जवाब दिया कि दोनों ही पहलू उस एक ही सवाल का हिस्से हैं। पहले स्थान पर तो समस्त दृष्यमान जगत एवं समस्त इंद्रियग्राह्य विषय क्षणिक एवं अनित्य हैं तथा मृत्यु (परिवर्तन) अनिवार्यतः पीछे पड़ी है, हर प्राणी के जो प्रकट होता है अथवा जो जन्म लेता है। केवल वह वस्तु जो कभी नहीं मिटती, वह शाश्वत्, स्थायी परब्रह्म है, जो समस्त जीवात्माओं के हृदय में विराजमान है तथा सृष्टि के समस्त प्रादुर्भाव में समाहित है।

यमराज ने इंद्रियग्राह्य इस विषय का जवाब दिया कि जिसे हम मृत्यु कहते हैं, वह है मृत्योपरांत आत्मा का दूसरी स्थिति में प्रवेश करना और वहाँ अपने सत्कर्मों का फल तथा बुरे कर्मों का दंड भोगना। दंड की अनिवार्यता के प्रावधान के कारण ही आत्मा को छोटी योनियों में प्रवेश करना पड़ता है; जैसे जानवर, निर्दयी व्यक्ति, पशु–पक्षी, रेंगने वाले जन्तु, कीट–पतंग आदि।

– नरसिंहम् स्वामी

द्वितीय महासमाधि संदेश

महासमाधि अर्थात् देह का आवरण उतारना, एक सामान्य मनुष्य के लिये यह दिन उसकी मृत्यु का दिन होता है या फिर मुत्यु की वर्ष–गाँठ। अभी हाल में दिवंगत हुई आत्माओं के लिये यह शोक का दिन है; पर जैसे–जैसे समय बीतता है, दुःख और दर्द भर जाता है, इसी दिन पवित्र एवं पावन स्मृतियाँ आती हैं तथा दिवंगत आत्मा का श्राद्ध एवं तर्पण किया जाता है; परन्तु संतों के लिये यह पुन्यतिथि अर्थात–देह–बन्धन से मुक्त होना, एक आनन्द–मंगल का दिन होता है। भौतिक आवरण से बाहर आने के बाद वे ईश्वर की सत्ता की पहचान एवं अनुभव कराने और ईश्वर के स्वरूप का परिचय कराने, भक्तों का मार्ग–दर्शन करने, उनका संरक्षण करने, एवं प्रार्थनाओं का उत्तर देने में अधिक सक्रिय हो जाते हैं। हमारे लिये उत्तम है कि यह दशहरा–इकादशी दिवस, जिस दिन साई बाबा ने महासमाधि ली थी, उसे हम ऐसे उत्तम विचार एवं कार्यों में लगाएँ, जिसकी बाबा अपेक्षा करते हैं।

अब हम विचार करते हैं कि साई बाबा क्या हैं और वे हमसे क्या चाहते हैं! बाबा एक ज्ञानी, साहसी, निडर, सत्यवादी, स्नेहमय एवं आत्मत्यागी मनुष्य थे; संत के रूप में अपने निजी स्वरूप को पहचानने वाले आत्मज्ञानी थे। इन दोनों में विशेष बात यह थी कि वे अपने भक्तों से अपेक्षा करते थे कि वे उनकी तरह परिपूर्णता प्राप्त करें! हमारे लिये आवश्यक है कि हम उनके कुछ विशेष गुण प्राप्त करें, जिनसे हम अपना लक्ष्य प्राप्त कर सकें और फिर जीवन के उच्चतम उद्देश्यों पर पहुँच सकें, जैसे कि उन्होंने स्वयं किया। हम बाबा में निर्भीकता देखते हैं। भगवान श्री कृष्ण के सद्गुणों की तालिका में सर्वप्रमुख है **'अभयशीलता',** बाबा को भी कोई डर नहीं था। उन्हीं की तरह हमें भी निडर होना चाहिए। बाबा को किसी मानव या दानव का कोई डर नहीं था। बाबा को अपनी शक्तियों पर पूर्ण भरोसा था तथा स्नेहमय भगवान के पूर्ण संरक्षण पर भी। हमें भी ऐसा भरोसा बाबा पर करना चाहिए। मृत्यु का उन्हें कोई डर नहीं था और न जीवन के उलट–फेरों से ही वह भयभीत थे। अगर हम बाबा की जीवन–लीलाओं का निरंतर स्मरण करें तो हम मृत्यु एवं जीवन के उतार–चढ़ावों से निर्भीक हो जाएँगे। मृत्यु क्या है? – मृत्यु केवल एक परिवर्तन है। इसीलिए न तो मृत्यु जैसी नाजुक संकट की घड़ी ने और न ही मृत्यु के उपरांत जीवन ने बाबा को कोई दुःख दिया अथवा हानि पहुँचाई। अगर हमें बाबा के सच्चे भक्त के रूप में जीवन जीना है तो मृत्यु और जीवन के उतार–चढ़ावों से हमें कोई दर्द या तकलीफ नहीं पहुँच सकती। मृत्यु बाबा के लिये ईश्वरीय

कृपा के रूप में वरदान साबित होती है। बाबा का उत्कृष्ट ईश्वरीय स्वरूप, जब वे सशरीर शिरडी में मौजूद थे, तब वे अपनी दैनिक जीवन–चर्या एवं जीवन–लीला जनसाधारण के समक्ष प्रकट करते थे। परन्तु इस साक्षात अवतार की देहस्वरूप परिमितता या सीमितता के कारण अधिकतर लोगों के सामने उनका दिव्य स्वरूप एवं अन्तर्दृष्टि गुप्त ही रही। शरीर त्यागने के पश्चात् बाबा का स्वरूप अधिक स्पष्ट एवं दैविक प्रतीत होता है। क्या अंतर है उस साई में तथा परमेश्वर में जो हमारी प्रार्थनाएँ सुनता है एवं उत्तर देता है? – निस्संदेह कोई अंतर नहीं है। ईश्वर को अनुभव–रूप में जानना, केवल आशीर्वाद–स्वरूप प्रार्थनाओं के रूप में पाना है। इन्सान साई को ईश्वर मानने के सही निष्कर्ष पर अपनी प्रार्थनाओं के उत्तर पाने के निजी अनुभव द्वारा पहुचँता है। बाबा भक्तों को आशीर्वाद के रूप में एवं प्रार्थनाओं का उत्तर साक्षात रूप में देते थे। शिंदे ने पुत्र प्राप्त करने की प्रार्थना, दत्ता मंदिर (गंगापुर) में की, तो साई शिरडी में शरीर–रूप में विद्यमान थे (शिंदे के प्रारब्ध–कर्म में पुत्र–रत्न की प्राप्ति नहीं थी) पर उन्हें उसी समय–क्रम में पुत्र की प्राप्ति हुई। इसी प्रकार अनगिनत लोग साई से प्रार्थना करते हैं और उनसे अभीष्ट उत्तर प्राप्त करते हैं।

निश्चित तौर पर वह शक्ति जो प्रार्थनाओं का उत्तर देती है, वह ईश्वर है। अगर वह शक्ति भगवान है तो ईश्वर का क्या महासमाधि–दिवस या श्राद्ध हो सकता है? क्या ईश्वर मर सकता है? "नही, ईश्वर सदैव जीवित है। वह हर प्राणी में हर क्षण नित्य और शाश्वत एवं निरंतर स्थिति में विद्यमान है। इसमें मृत्यु की घड़ी भी शामिल है और मृत्यु–उपरांत जीवन का हर क्षण भी। हमें जो अकसर बताया जाता है कि **'मृत्यु'** का अर्थ यदि **'विनाश'** या **'विलोप'** है, तो यह झूठ है। किसी भी वस्तु का आस्तित्व में न रहना या उसका विनष्ट होना सम्भव नहीं। मृत्यु केवल एक परिवर्तन है– दृष्य से अदृष्य होना। यह परिवर्तन ईश्वर हर प्राणी में करता है। जो मरता है, वह शारीरिक आवरण को छोड़ता है, न कि आंतरिक जीवन–शक्ति को छोड़ता है। जिसे हम ईश्वर कह सकते हैं, यह आंतरिक जीवन–शक्ति जीवात्मा कहलाती है। इस प्रकार जीव जन्म–जन्मांतर तक, आवरण बदलता रहता है, जब तक उसे स्वयं के अंतरंग की वास्तविक पहचान नहीं होती कि वह स्वयं भगवान है **'सत्, चित्त् और आंनद रूप'**! ईश्वर ही जीव में समाहित है और वही हर जीव में तब तक परिवर्तित होता रहता है, जब तक कि वह अपने निजी स्वरूप को नहीं जान लेता। किसी को भी इस परिवर्तन से भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है।

मृत्यु ईश्वर द्वारा रचित प्रावधान है, जो एक जीवन और दूसरे जीवन के बीच एक कड़ी या सीमा–रेखा है। इसका विशेष महत्व है – जीवन की प्रतिष्ठा बढ़ाना। जो मृत्यु का

साहसपूर्वक सामना करता है, वह वीर नायक या 'हीरो' है। वह यह समझने के लिये उपयुक्त है कि हम केवल शरीर नहीं हैं, इसके आगे भी कुछ शेष हैं, जो इस शरीर का उपयोग कर रहे हैं। कई बार ऐसा भी होता है कि शरीर को अपनी इच्छा से सही क्षण में त्याग दिया जाए। इस दृष्टिकोण की अनेक भौतिक एवं आध्यात्मिक उपलब्धियाँ हैं। जो मृत्यु का साहसपूर्वक सामना करते हैं, वे बहुत–कुछ प्राप्त करते हैं। यह एक शाश्वत् सत्य है, कि वही कीर्ति और महिमा को अर्जित करते हैं। भगवान श्री कृष्ण के अनुसार 'एक योद्धा को वीरता पूर्वक लड़ते हुए मृत्यु का आलिंगन करने से अधिक सार्थकता और किसी भी प्रकार संप्राप्त नहीं हो सकती।'

हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्ग जित्वा वा भोक्ष्य से महीमा ।
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः।।

यदि तुम युद्ध में मारे गये तो तुम्हें स्वर्ग–प्राप्ति होगी अथवा युद्ध में विजय प्राप्त होने पर पृथ्वी का राज्य भोगोगे। अतः हे कुन्तीपुत्र। युद्ध के लिये दृढ़ निश्चय करके उठ खड़े हो।

इस संसार से दो तरह के व्यक्ति ही स्वर्ग में पहुँच पाते हैं। एक तो सिद्ध योगी, जो अपने निजी स्वरूप को उस सर्वोच्च से एकाकार कर पाते हैं तथा दूसरे वे योद्धा जो युद्ध करते–करते अपने प्राण त्याग देते हैं।

अर्जुन ने निर्भीकता पूर्वक श्री कृष्ण के आवाहन का उत्तर दिया **(श्री कृष्ण के व्यंग्य से उत्तेजित होकर *'वाक्य क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ,'*** अर्थात **हे पार्थ कायरता को मत अपनाओ, क्योंकि यह तुम्हें शोभा नहीं देता। *'भया द्रणा दुपरंत मंस्यन्ते त्वां महा रथाः।'*** अर्थात **महारथी लोग भी तुमको ऐसा कायर समझेगें जो युद्ध से डरकर भाग रहा हो।) (*'आजी तब्ये मोहः– करिष्ये वचनं तव।'* 'मेरा भ्रम नष्ट हो गया है,' मैं आप की आज्ञा का पालन करूँगा।** और आगे भी **हे कृष्ण! युद्ध मेरा गर्व है।)**

साई ने अपने उदाहरण द्वारा यह सिद्ध किया कि भगवान कृष्ण का संदेश 'वीरता पूर्वक युद्ध करते–करते वीर गति को प्राप्त होना है; मृत्यु से डरने की आवश्यकता नहीं'। यही भगवत गीता के उपदेश का सार है। इसके साथ ही अहिंसा के व्रत का पालन करने का संदेश भी गीता देती है। दूसरी अन्य स्थिति में जहाँ पर योद्धाओं को युद्ध करके अपना कर्त्तव्य पूरा करने की आवश्यकता नहीं है। एक योद्धा जब मृत्यु का सामना साहस पूर्वक करता है

तब वह ऊँचे दर्जे का त्याग करता है। जिस देश के पास इस प्रकार के उच्चकोटि के योद्धा हों, वह देश सुरक्षित, स्वतंत्र एवं सम्पन्न रहेगा। जिस देश के पास इस प्रकार के योद्धा नहीं होंगे, वह देश असुरक्षित, गुलाम एवं बंधुआ मजदूरों की भांति हमेशा दुःखी रहेगा।

अब हम इस संदेश को तथा बाबा के प्यार एवं संरक्षण को महासमाधि से जोड़ते हुए समाप्त करते हैं। युद्ध में वीरतापूर्वक लड़ते हुए शरीर त्याग देना भी आसान प्रतीत होता है, तुलनात्मक दृष्टि से एक लम्बी आयु तक अपने ऊपर आश्रित हजारों भक्तों को संरक्षण देने तथा उनकी जरूरतें एवं आशाएँ पूरी करने में निरन्तर कार्यरत रहने में। बाबा की कृपा एवं सहायता तो रोजाना सैकड़ों लोग लेते थे, जब वे जीवित थे। बाबा ने एक बार जी. एस. खापर्डे से कहा था कि हजारों लोग उनसे रोज मदद माँगते हैं। उनका ध्यान हर दम रखने में उनकी स्थिति क्षीण हो रही है, यह सिलसिला तब तक जारी रहेगा जब तक हाड़–मांस का यह शरीर वे नहीं छोड़ते, परन्तु वह इस परेशानी और नुकसान से कतई चिंतित नहीं हैं, क्योंकि अपने जीवन और सुख के मुकाबले उनके लिये भक्तों एवं बच्चों का संरक्षण विशेष महत्व रखता है। यही क्रास है (प्रतीक चिन्ह) जिससे बाबा जुड़े हैं। इसी क्रास रूपी सिंहासन से बाबा की आत्मा प्रभुत्व एवं अध्यात्मिक उत्कर्ष पर स्थिर होकर भक्तों का उत्थान कर रही है। आज हम सब मिलकर बाबा को स्वर्गारोहण के दिन याद करते हैं, और समझते हैं कि जीवन का वास्तविक सत्य है **'परोपकार'** अथवा **'त्यागमय जीवन ही जीवन है।'** या **प्यार–भरी कुर्बानी ही जीवन है।** भोग–विलास में व्यतीत जीवन मृत्यु है। यदि हम सब मिलकर प्रयास करें तथा घोर संघर्ष द्वारा इस आदर्शवादी श्रेष्ठ सिद्धांत तक पहुँच पाएँ तो निश्चय ही हमें व्यक्तिगत एवं राष्ट्रीय ध्येय प्राप्त होगा। **"पात्रता प्राप्त होने पर ही तुम यह पाओगे"** – ऐसा ही साई ने कहा था।

नरसिंहम् स्वामी

तृतीय महासमाधि संदेश

साई बाबा का सन् 1945 का महासमाधि दिवस विश्व–इतिहास और हमारे राष्ट्रीय इतिहास के नाजुक दौर का हिस्सा रहा है। द्वितीय विश्व युद्ध का लगभग अंत हो चुका था; विश्व–शांति तथा पुनर्निर्माण के कार्यक्रमों की हर जगह चर्चा हो रही थी; पर स्थायी विश्व–शांति की कोई आशा–किरण दिखाई नहीं देती थी–शांति, जो देश एवं विश्व को सुस्थिर सामाजिक एवं राजनीतिक प्रतिनिधित्व प्रदान करे। यह प्रश्न सभी के मानस पटल पर रह–रह कर उभर रहा था।

यदि हम घोर निराशावादी दृष्टिकोण को दूर हटा दें, जिसके अनुसार प्रकृति का विधान अतिक्रूर है, प्रगतिक्रम में पहले भंयकर संघर्ष करने पर कमजोर की समाप्ति तथा शक्तिशाली की विजय निश्चित् थी; इस पर सचमुच विचार करें, जिसका कोई विष्वसनीय आधारभूत सिद्धांत नहीं है, और विरोध में प्राणियों का भौतिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास एवं कई अन्य व्याकुल कर देने वाले तथ्य हमारे सामने हैं। निर्पेक्ष दर्शकों के मतानुसार विजेताओं में दूरदृष्टि का न होना, आत्मनियंत्रण, सच्ची विद्वता और आचरण के अभाव में युद्ध के दोबारा भड़क उठने, यानी कि तीसरे विश्व युद्ध की संभावना की भविष्यवाणी की जा सकती है – तीसरा विश्व–युद्ध, जिसके कि पिछले दोनों विश्व युद्धों से अधिक भयानक एवं अधिसंख्य क्रूर परिणाम होंगे। ऐसे समय में साई–भक्तों एवं सामान्य जनता का क्या दायित्व है? बाबा की पुण्यतिथि के अविस्मरणीय दिवस पर हम भक्त एवं अन्य सब बाबा का अपने भक्तों के प्रति संरक्षण एवं उनके धरती पर अवतरण के उद्देश्य – **'मानव मात्र की भलाई के प्रति वचन–बद्धता'** के प्रति अपना आभार प्रदर्षित कर सकते हैं, कम–से–कम इस देश में तो अवश्य ही।

साई ने दयालु माँ के रूप में उस हर व्यक्ति को संरक्षण दिया, जिसने उनमें आश्रय ढूँढा और उन्हें प्राप्त करने की कोशिश की, वे हमेशा उनके आचरण एवं उनके कार्य–कलापों पर निगाह रखते हैं। बाबा उन्हें भौतिक एवं आध्यात्मिक संकटों से बचाते हुए, जीवन के वास्तविक उद्देश्य को प्राप्त करने के लिये, – मानवता की लम्बे समय तक स्वार्थ–रहित सेवा करने के लिए उनका मार्गदर्शन करते हैं। बाबा का सम्पूर्ण जीवन इसी पर केंद्रित था तथा उनके सचेत एवं ज्ञानी भक्त इस संदेश को उनकी कही गई बातों द्वारा समझ जाते थे। बाबा पूर्णतः स्वार्थ–रहित थे। वे अनगिनत लोगों का भला कर सकते थे। बाबा के हर सच्चे भक्त का यही उद्देश्य होना चाहिए वह वहीं तक लोकोपकार करें जहाँ तक उसकी सामर्थ्य एवं परिस्थिति इजाज़त दे। कोई भी यह नहीं कह सकता कि यहाँ गरीब मानव–प्रकृति पर ज्यादती की जा रही है। आजकल स्वार्थ, छल–कपट, अमीरों द्वारा गरीबों का शोषण, झूठ, पक्षपात एवं अन्याय के कई प्रकार के व्यवहार व्यक्तिगत एवं सामूहिक जीवन में देखे जा सकते हैं। इस प्रकार दुर्व्यवहार की निरंकुश लहरें हम सबको, इस देश तथा सम्पूर्ण विश्व को युद्धों में फँसाकर सबकी शांति भंग करके मानव–जाति को विनाश के कगार पर लाकर खड़ा कर सकती है। इस भयानक बीमारी की उचित रोकथाम की अत्यंत आवश्यकता है। राजनीतिक युक्तियाँ एवं सदाचार की उपदेशात्मक व्याख्याओं से भी

कुछ हासिल नहीं होगा। हमें भ्रष्टाचार के स्वरूप को निर्दयतापूर्वक नष्ट करना होगा, ताकि मानव जाति को बचाया जा सके। इस दिशा में नित्यप्रति प्रयत्न किए जाने चाहिए। यह भयानक विपत्ति जो हमारे ऊपर मँडरा रही है, उससे लोगों को किस प्रकार बचाना सम्भव है?

हर साई–भक्त ने यदि यह प्रण पहले नहीं किया है तो वह अब इसी क्षण करे कि वह अपने हर कार्य, विचार एवं वाणी पर नजर रखेगा, ताकि वह प्रेम, दया, सहनशीलता, दान, एवं भाईचारे से ओतप्रोत जीवन जी सके। दूसरे व्यक्ति एवं समूह जिनके साथ उसका सम्पर्क हो – चाहे वह किसी भी देश, जाति, धर्म, रंगरूप एवं हैसियत के हों, हमें स्वयं को तथा किसी अन्य व्यक्ति को भी इस मापदंड से दूर हटने से रोकना है। जहाँ तक सम्भव हो, घृणा तथा शत्रुता को दिमाग से हटाना है, तथा ढोंग, पाखंड एवं शोषण को भी समाप्त करना है। हमें हर रोज़ कुछ सकारात्मक काम करने हैं। सब को स्नेह, सत्य, न्याय एवं सेवा का संदेश देना हमारा उद्देश्य होना चाहिए। यह सामान्य निर्देश है। इन निर्देशों को बाबा की जीवन–शैली द्वारा सबको समझाना एवं दर्शाना है। बाबा के पास असीम शक्तियाँ थीं, जिनसे वे सकारात्मक एवं नकारात्मक कार्य कर सकते थे, परंतु बाबा ने उनका प्रयोग केवल कमजोर एवं अभागे व्यक्तियों के हितार्थ किया। बाबा ने मानवता की निस्वार्थ सेवा की, देश, जाति, वर्ण, वर्ग, पंथ और संप्रदाय का कोई भेद उनमें नहीं था। बाबा सबसे प्रेम करते थे। जिसमें पापी एवं अपराधी भी शामिल थे। बाबा ने लोगों को समझाया कि जब वे आपस में झगड़ा करते हैं और एक–दूसरे को भला–बुरा कहते हैं तो उनका दिल दुःखता है; परन्तु अगर वे एक–दूसरे के दोषों और भूलों को सहन करते हैं तो उनका दिल खुश होता है। उन्होंने यह भी कहा कि परस्पर बंटकर वे लुट जायेंगे, परन्तु एक–दूसरे से हमदर्दी और एकता उन्हें समृद्धि प्रदान करते हुए जीवन के गन्तव्य तक पहुँचा देगी। बाबा की मस्जिद में हिन्दू, मुसलमान, ईसाई एवं पारसी एक साथ मिलकर बाबा की पूजा एवं आराधना करते थे। एक महान सद्गुरु के प्रादुर्भाव में एक–दूसरे धर्मावलम्बियों को धवस्त करने से दूर हटकर, एक दूसरे के मंदिरों–मस्जिदों एवं उपासना–गृहों का वे निर्माण करने लगे, एक–दूसरे के साथ मिल–जुलकर इसी इमारत में खुशियाँ मनाने लगे। हिंदुओं ने मस्जिद का पुनर्निर्माण–कार्य किया। बाबा के एक ब्राह्मण भक्त श्री उपासनी बाबा ने अपने मंदिर के निकट एक मस्जिद का निर्माण करवाया। मुसलमान ईद का त्योहार मस्जिद में शांति से मनाते थे। जब हिन्दुओं की पूजा का समय होता तो मुसलमान भक्त मस्जिद में ढोल–बाजा बजाते, और इसी प्रकार हिन्दुओं की पूजा में मदद करते थे।

मुसलमान हिंदू देवताओं की मूर्तियाँ बनाने एवं मंदिर–निर्माण करने में हिन्दुओं की मदद करते थे। मुसलमान इस इमारत को मस्जिद कहते थे। वे पश्चिमी दीवार की तरफ मुड़कर इबादत करते थे; हिन्दू इसे द्वारकामाई नाम से सम्बोधित करते और विधि–विधान के साथ बाबा के चित्र की पूजा करते; दीपक जलाते, तुलसी–वृन्दावन की उपासना करते, बाजे बजाते, झाँझ एवं मंजीरा बजाते, तथा जोर–जोर से वैदिक मंत्रों का उच्चारण करते। ऐसा आनन्ददायक दृश्य हमें देश के अन्य भागों में भी देखने को मिलता है, जब हिन्दू एवं मुसलमान संत इस प्रकार मिलजुलकर कार्य करते हैं। जैसे आनन्दपुर में नागूर बाबा, बरदान गुफा आदि जहाँ मुसलमान या मुसलमान जैसे दिखते संत (जैसे साई बाबा) हिन्दुओं को हिन्दू कर्मकाण्ड, हिन्दूमंत्रों के विधि–विधानों पर उपदेश दें और यह निश्चित करें कि वे अपने पूर्वजों का धर्म नहीं छोड़ें तथा साथ ही वे मुसलमानों को इस्लाम पर चलने का मार्ग दिखाएँ और अन्य धर्मावलंबियों को

अपने–अपने धर्म–ग्रंथों में दी गई आचार–संहिता पर चलने को कहें।

अब इस विषय पर और गहराई मे जाने की आवश्यकता नहीं। अब हम सब मिलकर तहेदिल से कट्टरता, धर्मान्धता, असहनशीलता, घृणा, स्वार्थ एवं झूठ का विरोध करें, तथा इन सबको छोड़ने का दृढ़ संकल्प करें । पूरी ईमानदारी एवं तत्परता से इस दृढ़ संकल्प का पालन किया जाए तो इन सिद्धांतो को अपने आचरण एवं व्यवहार में उतारना मुश्किल नहीं है। हर रोज़ हमें अपने अच्छे विचारों को कार्य–रूप में परिणत करने के नये–नये अवसर मिलेंगें। हमारे कर्म स्वयं हमारे लिये बोलेंगें। सत्कर्मो की चमक के सामने बुरे कर्म और विचार वाले व्यक्ति, जिन्हें कि मानव–जाति के लिये दुर्भाग्य कहा जा सकता है, टिक नहीं पायेंगें।

नरसिंहम् स्वामी

चतुर्थ महासमाधि संदेश

अस्ताचल का समय और संध्या का तारा
दोनों देते हैं मुझको प्रतिदिन आमंत्रण।
इसके लिए न शोक–विलाप करो तुम कुछ भी
मृत्यु–सिंधु में मेरा अगर विलय हो जाए।'

जिस अंग्रेज कवि ने ये पंक्तियाँ लिखी हैं, वह एक निष्ठावान रहस्यवादी संत होगा, जो कि वास्तविक सत्य का आत्मसाक्षात्कार करके उसमें निरंतर निमग्न रहता होगा। मृत्यु से अज्ञानी जनमानस डरता है, परन्तु ज्ञानी को उससे कोई डर नहीं है। हम सब में से जो भी निरंतर जीवन की राह के बीच झाँककर **'सत्–चित्–आनन्द'** को एकाकार करने का प्रयास करेगा, वह भी इस कवि की तरह प्रसन्न होगा, जब उसका शरीर मृत्यु–रूपी परिवर्तन का आलिंगन करेगा तथा शरीर के भौतिक तत्व अपने–अपने उद्‌गम स्रोतों में समा जायेंगे। मिट्टी–मिट्टी में मिल जायेगी, वायु वायु में, जल जल में, प्रकाश एवं ऊर्जा, प्रकाश और ऊर्जा में। जिस आत्मा ने अपने निजी स्वरूप को पहचान लिया, उसके लिये लोक एवं परलोक, आने और जाने का कोई महत्व नहीं रह जाता। यदि यह अंग्रेज रहस्यवादी कवि एवं आम साधक धीरज, सम चित्तता एवं परमशांति को देह त्यागने के समय बनाए रख सकते हैं तब यह सुस्पष्ट है कि सन् 1918 में गौतम बुद्ध जैसे सम्पूर्ण सिद्‌ध और ज्ञानी श्री साई बाबा ने मृत्यु का कैसे धीरज और प्रसन्नता से सामना किया होगा। बाबा को जीव के वास्तविक स्वरूप का निरंतर आभास रहता था और वे निरंतर मार्ग–दर्शन करते थे उन व्यक्तियों का जो मृत्यु को समीप जानकर नित्य परेशान रहते हैं। उदाहरण के रूप में, अप्पा कुलकर्णी की पत्नी, एक परिपक्व उम्र की महिला, अपने पति को मौत के मुँह में जाते देख बाबा से प्राण–रक्षा के लिये उदी माँगने पहुँची तो बाबा ने उसे शांत किया तथा परिस्थितियों का शांतिपूर्वक सामना करने को कहा। बाबा ने आगे सुस्पष्ट किया कि, मृत्यु एवं जीवन ईश्वर के प्रकट रूप हैं। दोनों अवस्थाओं में ईश्वर की अभिव्यक्ति एक समान है तथा दोनों एक ही हैं। शरीर पुराने होने पर फेंक दिये जाते हैं। जिस प्रकार हम कपड़ों के पुराने होने पर उन्हें फेंक देते हैं। ***"अप्पा अपने वस्त्र मुझसे पहले बदलना चाहते हैं तो अप्पा को जाने दो, उन्हें मत रोको। उदी मत माँगो। मृत्यु के आगमन पर शोक मत करो। बुद्धिमान लोग मृत्यु पर शोक नहीं करते। मूढ़मति दुःख करते हैं। पाँचों प्राणों का उपयोग हमें जीवन में करना है। देने वाला***

वापस माँग रहा है तो उसे दे–दो। वायु वापस जाकर वायु में मिल जाएगी, अग्नि, अग्नि में समा जाएगी तथा पाँचों तत्व अपनी–अपनी जगह पहुँच जाएँगे। शरीर मिट्टी से बना है। वह मिट्टी में मिल जाएगा, इसमें कोई शोक का विषय नहीं" यही कहना है संत साई का। यह सत्य जो बाबा के मुख से शब्द–रूप में व्यक्त हुआ, यह निर्विवाद सत्य है। इस दृष्टिकोण को स्थापित करने के लिये जो युक्ति अपनाई गई है, उसका कोई मुकाबला नहीं है। इस प्रकार धारा–प्रवाह बोलने वाला पंडित भी इस सत्य का बोध करा सकता है, परन्तु अधिकांश लोग अपने जीवन में इस प्रकार के सत्य को आत्मसात नहीं कर पाते और न ही अपने आचरण में उतार पाते हैं। ***'परमदोषां डितम् स्वेच्छा चारे न द्रव्यते'*** यह कथन उन पर लागू होता है जो लोग दूसरों को भाषण तो खूब देते हैं, पर उस पर स्वयं अमल नहीं कर पाते।

बाबा इस श्रेणी के व्यक्ति नहीं थे। उन्होंने कभी भी वह उपदेश नहीं दिया, जिस पर वे स्वयं आचरण न कर सकें। बाबा को मृत्यु का पूर्ण अनुभव था, विशेषकर तब, जब अप्पा कुलकर्णी जैसे नाजुक मामले उनके सामने आते और ऐसे अवसर उनके पास अकसर आते ही रहते थे। बाबा मृत्यु से जूझ रहे व्यक्ति एवं उसके सम्बंधियों दोनों को ही हिम्मत बँधाते। बाबा अपने अद्‌भुत स्नेह एवं शक्ति द्वारा मृत्यु के करीब पहुँचे व्यक्ति के पास मौजूद रहते थे, चाहे वह शिरडी से हजारों मील दूर पर ही क्यों न हो तथा उसे नये संसार में प्रवेश करने में मदद करते थे। बाबा इस जगत में तथा इसके बाद के लोक में मार्ग–दर्शक का कार्य करते थे और आज भी कर रहे हैं। आश्रितों एवं निकट सम्बंधियों द्वारा मृत्यु–उपरांत भौतिक असुविधाओं एवं परेशानियों से निपटने के लिये बाबा आश्वासन देते कि वे उनका ख्याल रखेंगे एवं उनका हित सुरक्षित है। बाबा के आश्वासन कालांतर में सत्य प्रतीत होते। बालकराम मानकर के रिश्तेदारों को बाबा ने आश्वस्त किया था कि वे मानकर के पुत्रों का ख्याल रखेंगे। इस आश्वासन के कुछ समय पश्चात् ही मानकर का देहांत हो गया। उसके चारों पुत्रों को प्रतीत होने लगा कि वे गहन आर्थिक संकट में फँस गये हैं तथा कोई शक्तिशाली समर्थन करने वाला भी नहीं है, परंतु बाबा के अदृष्य हाथों के शक्तिशाली समर्थन द्वारा वे आज भी पहले से अधिक सुख–समृद्धि एवं खुशहाली का आनन्द ले रहे हैं – व्यवसाय एवं समाज में वे उच्च पदों पर आसीन हैं।

बाबा की महासमाधि कोई खेद का विषय नहीं है; न स्वयं बाबा के लिये और न ही उनके भक्तों के लिये। **बाबा के दृष्टिकोण के अनुसार वही नारायण, वही कबीर है जो हर क्षण अपनी शक्ति दूसरों के हित एवं भलाई में खर्च करे *"परोपकार सत्यम् विभूतः"***

दूसरों का उद्धार करने के लिये ही संत जीवित रहते हैं, बार–बार जन्म लेते हैं, विशेषकर गुरु या सद्गुरु के रूप में। बाबा ने घोषणा की कि वे अपने भक्तों का आध्यात्मिक उत्थान करने के लिए कृत–संकल्प हैं; जन्म–जन्मांतर तक, जब तक उनके भक्त अपने लक्ष्य तक न पहुँच जायें जो कि सर्व–शक्तिमान परमात्मा के चरण कमलों में है। ***"तहाद विष्णु परमम् पद्म सदा पंष्यति सूर्यायाह।"***

बाबा एवं उनके भक्तों के दृष्टिकोण के अनुसार उनकी परोपकारिक गतिविधियाँ तथा उनकी गंभीर यथार्थ प्रकृति ही उनके विशिष्ट और महान व्यक्तित्व का सार है और वह आज भी जारी है। इस हाड़–मांस के आवरण को त्यागने से पहले उन्होंने अपने भक्तों को आश्वस्त किया कि वह अमर हैं तथा मृत्युपरान्त वे अधिक सक्रिय एवं लोकहित करने में सदैव तत्पर रहेंगे। सन् 1918 के उपरान्त हजारों भक्तों ने इस अटल सत्य का अनुभव किया है। भौतिक जगत में परोपकार के अलावा आज भी बाबा आध्यात्मिक सहायता कर रहे हैं। इसका एक छोटा–सा अंश है– मृत्युशया पर पड़े भक्त की आत्मा का अगले लोक में मार्गदर्शन करना।

राव साहब पपिआह चेट्टिआर की पत्नी इस प्रकार की मदद पाने का नया–नया उदाहरण है। उनकी मृत्यु के समय उनकी आयु अधिक नहीं थी, उनकी मृत्यु के कारण उनके पति का दिल टूट गया। उनके जब प्राण निकल रहे थे तब उनके चेहरे पर मुस्कुराहट थी। मुस्कुराहट ने उनके पति को दुःख में राहत पहुँचाई तथा उन्होंने अपने पति को संदेश दिया कि उनकी मृत्यु के समय बाबा पास थे और वह उन्हें आकाशीय पिंड में ले गये। वह वहाँ अभी भी हैं तथा बाबा के मार्गदर्शन में वह प्रसन्न हैं।

नरसिंहम् स्वामी

पाँचवा महासमाधि संदेश

बाबा की असीम कृपा है कि उनका एक विनम्र दास आज फिर अपने साथी भक्तों को महासमाधि के अवसर पर सम्बोधित कर रहा है। **'महासमाधि'** एक विशेष महत्वपूर्ण घटना है। यह बाबा के शरीर–रूप को हमसे छीन कर ले गई, जिनके चरणों पर झुंड के झुंड नत्मस्तक थे। इस प्रक्रिया के द्वारा वे अपनी श्रद्धा और स्नेह बाबा को अर्पण करते थे। इसके साथ ही साई–भक्ति के एक नये युग का आरंभ होता है, जिसमें बाबा के पारलौकिक स्वरूप पर भारत के लोग ही नहीं अपितु समस्त विश्व के लोग खिंचे चले आयेंगे। बाबा जब शरीर–रूप में विद्यमान थे तब कुछ लोगों को बाबा के रहन–सहन एवं आदतों से परहेज़ था, परन्तु अब खुशी की बात है कि बाबा शरीर–रूप में हमारे बीच विद्यमान नहीं हैं। शरीर का स्थान पारलौकिक स्वरूप ने ले–लिया। या फिर बेहतर होगा कि इस पवित्र धार्मिक इंद्रियग्राह्य विषय को दैहिक अथवा सगुण शरीर से रहित अपनी सुविधा एवं इच्छा के अनुरूप हम समझ सकते हैं। इसके द्वारा अनेक धार्मिक एवं आध्यात्मिक संगठन उनके नाम से प्रेरित हो, कार्य कर सकते हैं।

शरीर का संबध व्यक्ति–विशेष से न हो, या निर्गुण साधक इस पर ध्यान न दें; परन्तु विशाल बहुमत में सगुण साधकों के लिये इसका विशेष महत्व है। जब हम श्री साई बाबा का उल्लेख करते हैं, तब हम उनके शरीर–रूप की चर्चा करते हैं, उनकी शरण में आने वाले नए लोगों के लिए उनके बारे में जानने से पहले उनके शरीर और स्वरूप का ध्यान करना आवश्यक है। जैसा कि भगवान श्री कृष्ण के विषय में भी कहा जाता है कि शरीर–रूप में कुछ समय तक रहने के बाद, सांसारिक लीला करने के पश्चात् उनको लगा कि समय आ गया है, शरीर को निकाल फेंकने का, केवल कार्य और उपदेश ही काफी हैं – आध्यात्मिक गतिविधियों को आगे बढ़ाने के लिये, तथा यह सिद्ध करने के लिये कि जीवन केवल नाशवान शरीर नहीं, उसमें अविनाशी जीव तत्व भी हैं, जिसमें विचार एवं कर्मो का समावेश है। एक शक्ति है, जिसके द्वारा यह जीवन–लीला तथा उपदेश निरंतर काल–प्रवाह के अंत तक जारी रहेंगे। भगवान कृष्ण ने अपना शरीर जन्म के लगभग 125 वर्ष उपरान्त त्यागा, परन्तु वे मरे नहीं, वे मर नहीं सकते, वे जीवित हैं; हमारी पुकार सुनते हैं; हमारे साथ रहते हैं, उनका हममें समावेश है। यह गूढ़ विषय है। साई बाबा ने भी जब अपना शरीर छोड़ा, तब उनकी आयु रही होगी कोई लगभग 75 या 125 वर्ष। वे आज भी जीवित हैं और कार्य करते हैं, उनके चमत्कार और उनकी सहायता सबको मिलती है जो उनसे याचना करते हैं और उनसे माँगते हैं। यह सब कहने की आवश्यकता नहीं है, इसे सिद्ध किया जा सकता है। बाबा के बच्चों को उनके

जीवन्त होने का प्रचुर मात्रा में अनुभव है; उन्हें प्रतीत होता है कि बाबा हर क्षण उनके पास हैं; तथा हजारों हाथों से उनका साथ दे रहे हैं।

आप लोगों को इस विशेष महोत्सव पर अब मैं क्या कहूँ, जब आपने साई–भक्ति का जीवन शुरू कर दिया है, तब आप इसे और उन्नत करें। आप जानते हैं कि बाबा को समर्पण का अर्थ है–अपनी भलाई दूसरों की भलाई में समझना एवं चारों दिशाओं में तथा हर कार्य में भलाई करना। ऐसा क्या है, जो साई अपने प्रिय भक्तों के लिये उपलब्ध नहीं करा सकते! हमें पूरा विश्वास है कि साई के लिये कुछ भी असम्भव नहीं है। यदि ऐसी कोई उपलब्धि है तो शायद वह सृष्टि के प्रावधान एवं विधि के विधान के विरुद्ध है और शायद उसको पाने में हमारी कोई भलाई नहीं है। हमें बाबा के प्रेम, दूरदृष्टि एवं संरक्षण पर पूर्ण भरोसा रखना है। इस प्रकार यदि हमारी कोई बुराई और हानि भी हो तो उसे हमें अंतिम भलाई के लिए पहले कदम पर ही सहन करना होगा। धार्मिक सिद्धान्तों के अनुरूप हम मानते हैं कि बुराई को भी बनाने वाला ईश्वर ही है तथा वह भी भलाई के लिए ही बनाई गई है। जो बुराई दिखाई देती है, उसे भी अंत में भलाई में ही विलीन होना है। हम जितना बुराई का सामना करते हैं उतना ही बाबा में श्रद्धा एवं विश्वास बढ़ता जाता है और बढ़ना भी चाहिए। जैसा कि कुन्ती ने कहा था – **"ज्यादा सुख भी हमें ईश्वर से दूर करता है तथा विपत्तियों का आरम्भ हमें परमेश्वर की याद दिलाता है।"** हर परेशानी आने पर हमें प्रार्थना करनी चाहिए। इससे न केवल परेशानी से मुक्त होने की युक्ति और शक्ति मिलेगी, बल्कि बाबा की कृपा का अनुभव भी होगा। धीरे–धीरे जीवन में कदम–कदम पर अपने को सुधारकर बाबा की अकथनीय एवं अवर्णनीय कृपा द्वारा हम आगे बढ़ें। अब हम और शक्ति माँगते हैं, जिसके द्वारा अच्छाई एवं बुराई के प्रति हमारी सहनशीलता में वृद्धि हो, भगवत गीता में जिसका गुणगान किया गया है, तथा साई की जीवन शैली में भी समाहित है – **'समतत्व' द्वारा 'असंग' की प्राप्ति** हमारे पास एक और सलाह है। आप लोगों को जिस चीज़ की भी आवश्यकता हो, आप उसके लिये साई से प्रार्थना करें एवं पूर्ण विश्वास के साथ कर्म एवं प्रयास करना शुरू करें। बाबा की मातृ–सुलभ कृपा–दृष्टि आप के प्रयासों पर फलों की वर्षा करेगी। साई–भक्तों का वृक्ष दिन–प्रतिदिन बढ़ता चला जा रहा है। हमें और भी अधिक संवेदनशील आत्माएँ मदद के लिये तैयार मिलेंगी, जो केवल आध्यात्मिक संवेदना ही नहीं, बल्कि लौकिक एवं ऐहिक मदद भी सहर्ष देने के लिये तैयार हो जाएँगी – जैसे कि भाई–बहन एक–दूसरे को देते हैं। वास्तव में अब समय आ गया है कि उनकी साई बाबा के चरणों में प्रीति को एक संस्था का जीता–जागता रूप प्रदान किया जाए, जिसका उद्देश्य पूरे देश में साई बाबा के मठ एवं मिशन की स्थापना करना होगा। उनका संचालन साई ब्रह्मचारी एवं साई स्वामी करेंगे।

समस्त साई भक्तों का समूह इन भावनाओं एवं प्रेरणाओं को अपने आचरण में उतारकर जीते–जागते चर्चों (मंदिरो) का निर्माण करेंगे। इन विशेष संचालकों का आचरण भी जीते–जागते चर्चों या मंदिरों जैसा ही होगा।

अब एक प्रश्न जो प्रायः उठाया जाता है कि क्या साई–भक्तों का किसी वस्तु की प्राप्ति–हेतु प्रार्थना करना उचित होगा? क्योंकि भगवान साई, जिनसे हम प्रार्थना करते हैं, वे सब जानते हैं। वे सर्वज्ञ हैं तथा हमारी जरूरतें भी जानते हैं। वे सर्व–शक्तिमान हैं, तथा हमें सब–कुछ प्रदान करने में सक्षम हैं। इस पड़ाव पर इस प्रश्न का यह उत्तर काफी है कि जब तक हमारे अन्दर एक उमंग या सनक उठ रही है कि हमें अमुक वस्तु की अति आवश्यकता है तो उसके लिये हमें शक्तिशाली मित्र एवं संरक्षक से प्रार्थना करनी है कि वह इन लाचारियों में हमारी मदद करें। यही उचित है कि हम इस सनक या उमंग के अनुसार चलें, जो कि संभवतः बाबा द्वारा ही भेजी गई है। यह सच है कि वह इसके माध्यम से हमें अपनी तरफ खींच रहे हैं। इस तरीके से वे हमारी भलाई कर रहे हैं। यहाँ दुर्बल एवं कमजोर इन्सान हैं जिन्हें हम अविकसित मानव भी कह सकते हैं, उन्हें तर्क द्वारा धर्म शास्त्र और तत्वज्ञान अपने ऊपर हावी नहीं होने देना चाहिए। हमारे अन्दर बहुत–कुछ है जो हम नहीं समझ पाते, – शुरुआत में तो बिलकुल नहीं; जिसके कारण हमारे भीतर विश्वास एवं प्रार्थना के आवेग जगाये जाते हैं। जब हम शुरुआत करते हैं गिरकर, बैसाखियों द्वारा सहारा लेकर, डगमगा कर चलने की, सँभलकर, उठकर अथक प्रयास द्वारा परमपिता के चरणों तक पहुँचने की और इस राह पर चलते–चलते दुनिया की हर वस्तु को पाने की । यहाँ समय की बहुतायत है । अपने लक्ष्यों तक पहुँचने के लिए समय का बंधन नहीं है। हमारी इस यात्रा में हमारा लक्ष्य तब तक बदलता रहता है जब तक हम अंतिम लक्ष्य तक नहीं पहुँच जाएँ– जिसका बखान ऊँची आत्माएँ करती हैं, तथा जिसके विषय में हमने सुना अवश्य है, किन्तु उन्हें हम यात्रा के शुरू में जान नहीं सकते, देख नहीं सकते। जैसे–जैसे हम चढ़ाई शुरू करते हैं, ऊँचाई पर ऊँचाई चढ़ते हैं, हमारा उद्देश्य होता है **'श्रेष्ठतम',** पहाड़–पर–पहाड़ सामने आएँ और दूर भविष्य में **'सर्वोच्च सर्व श्रेष्ठ'** दिखाई देते रहें, जिन पर हम पहुँच सकें।

'मुझको है विश्वास, सभी कुछ शुभ ही होगा।
और अन्ततः होगा सब सुंदर मंगलमय।
बदलेगा हर शरद सुहानी नव मधुऋतु में।'

समय एवं काल पर दूरदृष्टि वालों के लिए मेरी तरफ से एक खुशी का समाचार है। जिन ऊँचाइयों पर आपको चढ़ना है, उनका रास्ता किसी नक्शे अथवा पुस्तक में नहीं दर्शाया गया। उनका पहले से कोई विवरण किसी व्यक्ति–विशेष के लिये नहीं बताया जा सकता।

अब लिखित नक्शों एवं किताबी ज्ञान की कमी उत्साही भक्तों को कभी महसूस नहीं होती, क्योंकि शक्तिशाली और स्नेह–भरे गुरु के हाथ तथा त्रिकाल दृष्टि ही हर समय, हर जगह हमारा मार्गदर्शन कर रही है। राह के खतरों से हमें अवगत कराकर, हमें उनसे बचाकर, वे हमें और आपको लक्ष्य दिखायेंगे। हमको शक्ति और उत्साह प्रदान कर हमारे लक्ष्य का मार्ग आलोकित करेंगे।

जिन लोगों में इस प्रकार की आध्यात्मिक ऊँचाईयों पर चढ़ने की क्षमता नहीं है, उनके लिये साई माँ के पास कई रास्ते हैं, जो विभिन्न उपायों एवं मार्गों से इस राह पर चलने में सहायता प्रदान करते हैं। ये सब असंख्य हैं। मैं यहाँ पर एक मार्ग ही बताकर इस संदेश को समाप्त करता हूँ। आपस में मिलजुलकर एक दूसरे की मदद करके जो खुशी हमें मिलती है, उसका स्वाद अनुभव करें। यह कार्य स्वार्थ–रहित होना चाहिए। हमें अपने एवं अपने परिवार के लिये न्यूनतम जरूरतें एवं सुख–समृद्धि ही जुटानी हैं। साई ने यह कार्य हजारों के लिये किया और आज भी वे अनेक के लिये कर रहे हैं। जब साई ने यह कार्य अनेक लोगों के लिये किए हैं तो वे हमारे लिये भी करेंगे और हम में से हर एक के लिये करेंगे। आप यह नियम बनालें कि सुबह–शाम दोपहर साई के विषय में सोचेंगे, पुस्तक पढ़ेगें, और साई को अपने जीवन में उतारेंगे। आप जो भी करें, जैसे भी खायें–कमायें, अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखें या प्रार्थना करें आप नियमित अध्ययन करें **'भक्तों के अनुभव', 'साई बाबा चार्टर एंड सेइंग्स'** का या बाबा से सम्बंधित किसी अन्य पुस्तक का। यह एक विश्वस्त तरीका है जिससे कि आप इस मार्ग पर स्थिर होकर नियमित होंगे तथा आपको जीवन के हर क्षेत्र में सफलता एवं सार्थकता प्राप्त होगी। एक बार मैं फिर आप सबको बाबा के नाम पर सफलता एवं प्रसन्नता का आशीर्वाद देता हूँ।

नरसिंहम् स्वामी

छठा महासमाधि संदेश

जीवन में सफलता और सार्थकता केवल साहसी, निर्भीक एवं परिपूर्ण व्यक्यिों के हाथ लगती है – उनके, जो गंभीरता से यत्नपूर्वक प्रयास करते हैं और सर्वस्व त्याग करने के लिये तत्पर रहते हैं। इसमें अर्जित धारणाएँ, घृणाएँ, इच्छाएँ एवं लगाव भी शामिल हैं। आमतौर पर यह स्वीकार नहीं किया जाता कि अपनी कमजोरियों को छोड़ना सबसे मुश्किल है। वे कमजोरियाँ जो हमें हमारी वास्तविक सच्चाई और हमारे अस्तित्व का सामना करने नहीं देती, उनको छोड़ना अत्यन्त कठिन है। अकसर लोगों के सामने कई विशाल संकट और अड़चनें, सफलता के आड़े आती दिखाई देती या प्रतीत होतीं हैं और वे इनसे भयभीत रहते हैं। साहस बटोरकर, हिम्मत जुटाकर परेशानियों पर प्रचंड इरादे से ध्यानपूर्वक आँख फाड़कर देखने पर, निरीक्षण करने पर, विषय की तह तक जाने पर सोचते हैं कि क्या इस मुसीबत में हमें आगे बढ़ने से रोकने की शक्ति है। ओह! ऐसे निरीक्षण अकसर सामने दिखने वाले विशाल दैत्य का खोखलापन ही प्रकट करते हैं और निश्चय ही आसानी से उन्हें गिराया जा सकता है। अकसर जब कोई अपने आप को लाचार, विवश एवं निराशाजनक स्थिति में पाए, तब वह तुरंत अपने आप को झटक कर; प्रार्थना की मनस्थिति में जाकर, चारों दिशाओं में सोचना और रास्ता ढूँढना शुरू करे; ध्यानपूर्वक निरीक्षण करे कि कहीं से कोई सहायक हमारी मदद तो नहीं कर रहा; हमें यकीन है कि वह आशाजनक संभावनाओं की व्यवहारिकता एवं वास्तविकता को महसूस करेगा, जिसकी अनुकम्पा से वह कम–से–कम आंशिक रूप से तो सफलता प्राप्त कर ही लेगा।

हम सब मिलकर, साहस करके और निर्भय होकर सोचना शुरू करें कि हमारी वास्तविक शक्ति, सार्थकता एवं न्याय–संगत तर्को द्वारा दृढ़तापूर्वक व्यक्त होने वाले सत्य, मान्यताएँ, पंथ एवं समुदाय, जिनका हम पर प्रभाव पड़ता है और हम कई बार पाते हैं कि वे हमें निराशाजनक स्थितियों में डालते हैं। उन पर हमें अपने स्तर के नीचे जाकर सोचना है। हमें अपने ध्येय, लक्ष्य एवं मापदण्ड का पुनर्मूल्यांकन करना है। हमें निर्भीक होकर अपने आपसे प्रश्न करना है कि हमारा वास्तविक गन्तव्य क्या है? क्या यह वास्तव में चिन्तनीय है या नहीं? अगर है तो इस दिशा में सफल होने के लिये कौन–कौन से कदम उठाने की आवश्यकता है? अब हमें दृढ़ता से निश्चय करना है कि हमें आवश्यक कदम बढ़ाने हैं, लक्ष्य को पाने के लिये चाहे हमें कितना भी त्याग करना पड़े, क्योंकि हमारा ध्येय त्याग से अधिक बहुमूल्य है। अगर यह त्याग से बहुमूल्य है तो इससे मुँह मोड़ना कायरता है। यदि केवल जीवित रहना हमारा ध्येय नहीं है, यदि हमारे इरादे श्रेष्ठ एवं ऊँचे हैं, तो हमें अपने लक्ष्य को पाने के लिए अपना जीवन न्योछावर करने को तैयार रहना चाहिए। हर सुख, आराम और सुहावनापन, जिसका हम आलिंगन कर रहे हैं, उसको त्याग देने के लिये हमें सदैव तत्पर रहना चाहिए।

अब उदाहरण के रूप में हम सामान्य जीवन का सावधानी से निरीक्षण करते हैं; पहले

व्यक्तिगत, फिर सामाजिक, फिर राजनीतिक और फिर अन्य दिशाओं में व्याप्त जीवन का। हम रोजाना 15–30 मिनट इस महत्वपूर्ण विषय पर स्वयं विचार क्यों नहीं करते? हमें भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है कि हमारी यह जिज्ञासा हमें तत्वज्ञान में फँसाकर पागल कर देगी। यह कोई बुद्धि या चतुराई की खोज नहीं है जो हमें विवेक–बुद्धि एवं विचार–शक्ति से अलग कर देगी। आजकल लोकाचार में कायरता से भरे विचारों की तरंगें हमें जनता के बीच सुनने को मिलती हैं। वास्तव में बिना विचारे और बिना समझे अनजान बने नासमझ लोगों द्वारा वे फैलाई जाती हैं। जो कोई सुनता है, उसे आगे बढ़ा देता है। इसे हम वर्तमान युग का प्रभाव मान लेते हैं।

हमें हिम्मत जुटाकर ऐसे प्रभावों एवं विचारों के विरोध में खड़े होना है। हमें तर्क, उचित कारण एवं विचार–शक्ति द्वारा उसकी सत्यता की गहराई तक जाना है। अकसर हमें लगेगा कि आम आदमी तो अपनी क्षमताओं, कर्तव्यों, सम्भावनाओं एवं दायित्वों को पूरा करने के योग्य भी नहीं है। वह इनके प्रति अन्याय कर रहा है। पहले हम यह सवाल उठाते हैं कि हम किसके लिए जी रहे हैं और किसके लिए प्रयत्न कर रहे हैं? अधिकतर लोग खाने–पीने के साधन जुटाने के लिए भागते फिर रहे हैं? क्या मुझे धनसम्पदा की चाहत है और मैं उसे पाने का प्रयत्न कर रहा हूँ? क्या मैं किसी पद–पदवी तथा विशेष मानसिक या शारीरिक शक्ति अथवा प्रसिद्धि पाने की कोशिश कर रहा हूँ? क्या मैं विशाल जनमानस की निगाहों में इज्जत कमाने के लिये प्रयास कर रहा हूँ? मुझे बिना पक्षपात के न्यायाधीश की तरह अपना आँकलन करके फैसला करना है कि इन सबमें किसका प्रभाव है? या फिर किसी अन्य कारण से मैं किसकी गुलामी कर रहा हूँ? निडर होकर मुझे पवित्र अंतःकरण से अपने आचरण एवं व्यवहार का निरीक्षण करना है। मुझे निर्णय लेना है कि कौन–सा उद्देश्य कौन–सी धुन या शक्ति वर्तमान में मुझ पर हावी है? इसके पश्चात्, मुझे अपनी अन्तरात्मा से पूछना है, "क्या केवल यही है जो तुम्हें जीवन में प्राप्त करना है या फिर इसके अतिरिक्त भी कोई अन्य उद्देश्य है? अगर है, तो इनमें सर्वोत्तम विकल्प क्या है? क्या यह उचित जीविका के लिये है, जिस पर पूरा जीवन न्योछावर किया जाए? क्या पूरी जीवन–ऊर्जा इस दयनीय पदार्थ पर नष्ट कर दी जाए? क्या मुझे सुख, संतोश, प्रसन्नता या तृप्ति मिल पायेगी? पहले इसे अपना ध्येय बनाने पर, इसको पाने का प्रयत्न करने पर और इस दिशा में अनेक कदम बढ़ाकर पहुँचने की कोशिश करने पर और अन्ततः उसे पा जाने पर।"

आम लोग इस प्रश्न से बचते हैं, डरते हैं कि इस आत्म–जिज्ञासा पर लोग हँसेगें या फिर इस डर से कि इस राह पर चलने पर बहुत से लोग उनके विरोधी हो जायेंगे तथा आम जनधारणाएँ भी लड़ने के लिये ललकारती हैं; या फिर यह डर कि यह मानसिक परिश्रम शारीरिक तथा मानसिक संतुलन को अस्त–व्यस्त करके रोग–शैय्या पर या मानसिक अस्पताल में पहुँचा देगी। चाहे जो भी हो, हमें हिम्मत करके संघर्ष करना है और सर्वोच्च तक पहुँचना है तथा असफल होने पर दोबारा शुरू हो जाना है; बारंबार एक ही दिशा में प्रयत्न कर गुरु एवं ईश्वर में दृढ़ विश्वास रखना है। इस प्रकार के तेजस्वी और उत्कृष्ट विचार और

प्रयास हमें उस सर्वोच्च एवं उत्कृष्ट लक्ष्य तक पहुँचा देंगे, जो हमें जीवन में प्राप्त हो सकता है।

इस शुद्ध, दृढ़, हठी और उत्साही जीवनसत्व में साई बाबा ने जीवन के करीब सत्तर वर्ष व्यतीत किए। यही उनके चरित्र का वैशिष्ट्य है। बाबा के चरित्र को दैव प्रकृति कहा जा सकता है। बाबा के युग्म को दैविक कहा जा सकता है। बाबा साहसपूर्वक महासत्य के ब्रह्म वाक्य **'अयम आत्मा ब्रह्म' 'तत्वमसी' 'अहम् ब्रह्मास्मि'** का प्रयोग अरबी एवं उर्दू में करते थे, जैसे **'अनल हक' 'कयम अलाहम्',** अधिकांश जनमानस तो इस महासत्य को कि हमें अपने स्वयं के अंहकार को समाप्त कर जगत् की उत्पत्ति के जनक में जहाँ से इसका उदय हुआ है, विलीन करना है, (जिस प्रकार प्रतिबिम्ब का उदय बिम्ब से होता है) की असम्भव सम्भावना के अभ्यास के योग्य उपाय के विचार से भी लड़खड़ा जाते हैं। बाबा ने साहसपूर्वक अपना स्वयं अस्तित्व सर्वव्यापी परमात्मा– **'अल्लाह'** में विलीन कर दिया था। हम–में से अधिकांश अपने आप को शरीर की एकरूपता से मुक्त नहीं कर पाते। बाबा तो साहसपूर्वक स्थूल शरीर को लाँघ जाते थे और वे शरीर से ऊपर चले जाते थे। उनके स्वयं के शब्दों में, **"यह शरीर मेरा घर है, मेरा गुरु मुझे इससे बहुत दूर ले गया–बहुत समय पहले।"** अर्थात गुरु की अनुकम्पा द्वारा उन्होंने देहात्म–बुद्धि पर विजय प्राप्त कर ली। न केवल बुद्धिमानी से बल्कि आत्म–साक्षात्कार द्वारा **"इस शरीर को चिता पर रखकर जला दो"** एक बार बाबा ने अपने शरीर की ओर इशारा करते हुए कहा था, और **"मैं इसका साक्षी यथार्थ में निर्विकार रहूँगा।"** इसका अभिप्राय है कि वे जब शरीर–रूप में थे तो उन्होंने अपने निजी स्वरूप को जान लिया था और वे शरीर में सीमित नहीं थे। जीवन–मुक्त की तरह बाबा को अपनी दैविक प्रकृति का अहसास था और वे जीवन–मुक्त थे। अक्टूबर 1918 में हाड़–मांस की काया को छोड़ने के बाद वे विदेह होकर अपने भक्तों के कल्याण में तल्लीन हो गए। भक्तों के कार्य वह ईश्वर–रूप में करते हैं। यही महासमाधि का अर्थ है। बाबा की इस महासमाधि के अवसर पर हम भक्तों को उनका पूर्ण अनुग्रह प्राप्त है। हमें इस अनुग्रह का पूर्ण उपयोग करना है। हमारे मन की आँखों को उनके चित्र–स्वरूप के अलावा उनकी दिव्य लीलाओं की चमक–दमक भी, आलोकित करती रहे। यह तस्वीर दिन–प्रतिदिन फैल रही है, तथा हमारे विभिन्न प्रयासों में हमें न केवल आशीर्वाद देती है, बल्कि हमारे जीवन को भी बदलती है।

नरसिंहम् स्वामी

सातवाँ महासमाधि संदेश

श्री साई की महासमाधि के अवसर पर एक बार फिर मैं आप सब को सम्बोधित कर रहा हूँ। मैं आवश्यक रूप से साई के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। इस शरीर का जीवन बढ़ाने के लिये तथा स्वास्थ्य और शक्ति प्राप्त करने के लिए, ताकि मैं उनको अपनी सेवाएँ दे सकूँ। मेरा अगला कर्तव्य बाबा के प्रति भक्ति रखने और उनकी सेवा करने के लिए आपके प्रति शुक्रिया अदा करना है। स्पष्ट रूप से विश्वास की शक्ति हमें बाबा की सेवा एवं मानव जाति की सेवा करने के लिए बल देती है। हमारा निजी स्वार्थ तथा छोटी और बड़ी कामनाओं की चाहत हमें हमारे विश्वास को मजबूत करने के लिए हमें बाबा की ओर प्रेरित करती है। शक्ति का अनूठा स्पष्ट प्रदर्शन केवल विरले ही कर पाते हैं, जिनमें ब्रह्म–सम्बंधी शक्तियाँ विकसित हों और वे सही भविष्यवाणियाँ कर सकें। रोगियों को स्वस्थ करना, शारीरिक एवं मानसिक विकारों को दूर करना तथा अन्य प्रकार के उत्कर्षमय कार्य बाबा के नाम पर करना आदि शामिल हैं। इस प्रकार के कार्य बाबा की अनुकम्पा के स्पष्ट उदाहरण हैं तथा इनका काफी आदर–सम्मान होता है। हम इन सब शक्तियों को धन्यवाद देते हैं, – चाहे ये हम में प्रकट हों या फिर किसी अन्य में। फिर भी इन सब के साथ संशय एवं मतभेद भी जुड़े रहते हैं। इनके परिणाम एवं महत्व, अथवा उनके महात्मय एवं उपयोगिता के कारण इनमें कुछ शब्द जोड़कर साई–भक्तों के विशाल समुदाय का मार्ग–दर्शन तुरन्त करना अति आवश्यक है। जिस भक्त में इस प्रकार के विशेष लक्षण स्पष्ट रूप से प्रकट हुए हैं, उन्हें विशेष मान–सम्मान एवं आदर देना है, विशेषतः जब ये निस्वार्थ सेवा के लिये प्रयोग किये गये हों। इनके प्रभाव से दूसरों में बाबा के प्रति दृढ़ विश्वास पैदा करने की स्पर्धा शुरू हो जायेगी। कुछ भक्त इस तरह अपने आप से बाबा के प्रति दृढ़ विश्वास जाग्रत कर लेंगे, ताकि इस प्रकार के चिह्न उनमें प्रकट हों, यदि उनकी आयु, स्वास्थ्य एवं परिस्थिति उनका साथ दे। अन्यथा इस प्रकार की अनन्य धर्म निष्ठा और भक्ति का असर उनके स्वास्थ्य एवं जीवन पर भी पड़ सकता है। ऐसे उत्साही भक्तों को सलाह दी जाती है कि वे इस प्रकार का कार्य करने से पहले और बाद में भी योग्य गुरु एवं अन्य सक्षम लोगों से मार्गदर्शन लें। परन्तु कोई भी इस गलतफहमी में न रहे कि केवल इस प्रकार के विचार या फिर श्रद्धा, जिनके कारण ये चमत्कार होते हैं, यहीं और यहाँ पर ही आध्यात्मिक गतिविधियों का सर्वस्व है और यहीं उनकी समाप्ति भी है। यह यौगिक चमत्कार कई बार भ्रामक होते हैं और कई बार ऐसी जगह प्रकट होते हैं, जहाँ पर पवित्र धार्मिकता होती ही नहीं। परंतु जब हमने सब कह डाला तो, यही उचित है कि हम श्रद्धा और विश्वास रखें, विशेषतः चमत्कारों पर भी विश्वास रखें। हमारा ध्येय तो

सर्वोच्च शिखर पर पहुँचना है। इस यात्रा में कोई गलतफहमी हमें भयानक खतरे में डाल सकती है, विशेषतः उन लोगों को, जो इस प्रकार के चमत्कार करते हैं।

ऐसी उम्मीद की जाती है कि हर एक और आप सब, निरन्तर प्रयास द्वारा बाबा में श्रद्धा एवं विश्वास को उन्नीत करेंगे और मानव–जाति की सेवा करने के प्रयासों में निरन्तर वृद्धि करेंगे, विशेषतः साई–भक्तों के रूप में। रास्ते चारों तरफ खुले हैं। अपने साथियों का भला हर तरफ से, हर दिशा में और जीवन के हर रंग में करना है। अब हम कुछ उदाहरण देते है, इन रास्तों के। यहाँ पर, जो लोग बाबा के भक्ति–गीतों की रचना करते हैं, या ग्रामोफोन पर रिकार्डिंग करते हैं, तथा साई–ड्रामा, नृत्य–नाटिका, और साई–कथाओं की रचना करते हैं, उनके ये कार्य कभी भी निम्न श्रेणी या नीचे दर्जे के नहीं गिने जा सकते, बल्कि हर किसी के पास इस प्रकार की शक्तियाँ, वरदान या कलाएँ नहीं होतीं। अब दूसरा उदाहरण भी देना जरूरी है। सार्वजनिक उपयोग के भवन जैसे अखिल भारतीय साई–समाज की इमारत आदि के लिये आर्थिक मदद देना। यह एक अन्य तरीका है साई–युग में हिस्सा लेने का। मायलापुर में भवन–निर्माण–कार्य शुरू तो हो गया था परन्तु कार्यकर्ताओं तथा 10–20 हजार रुपये की कमी के कारण कार्य को बीच मे ही रोकना पड़ा। यदि हम सस्ते से सस्ता कार्य करवाएँ तब भी। जो लोग साई–युग में हिस्सा लेना चाहते हैं, और कुछ सहायता–कार्य करना चाहते हैं वे स्वयं दान दे सकते हैं और समाज में इच्छुक दान–दाताओं को आर्थिक मदद करने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। यह संदेश मैं बाबा के अनुग्रह के साथ समाप्त करता हूँ और प्रार्थना करता हूँ कि बाबा अपने बच्चों को मार्ग–दर्शन दें ताकि वे उनकी अनुकम्पा एवं विवेक द्वारा एक खुशहाल जीवन व्यतीत कर सकें तथा दूसरों के लिए प्रकाश–स्तंभ बनकर सम्मान का उदाहरण प्रस्तुत कर सकें, जिससे कि उनकी श्रद्धा एवं विश्वास के अद्‌भुत अनुभवों का लाभ अन्य लोग भी उठा सकें।

नरसिंहम् स्वामी

आठवाँ महासमाधि संदेश

प्रचलित भाषा में हम जिस स्थिति को मृत्यु कहते हैं, वह स्थिति परमज्ञानी एवं परम भक्त – जैसे श्री साई नाथ महाराज के लिए महासमाधि कहलाती है। पारिभाषिक अन्तर आवश्यक है – साधारण व्यक्तियों को, एक आम आदमी की मृत्यु और संतों के शरीर–त्यागकर अपने निजधाम जाने में अन्तर स्पष्ट करने के लिए। आम आदमी के लिए मृत्यु शोक का विषय है, क्योंकि इससे जीवन के सुख–चैन और आराम से नाता टूट जाता है और अज्ञान दशा में (एक अज्ञात देश को जाना होता है, जहाँ से कोई यात्री आज तक वापस नहीं लौटा) परम ज्ञानी एवं समर्थ सद्गुरु जैसे, श्री साईनाथ महाराज, के लिये मृत्यु के बाद की दशा भी वैसे ही स्पष्ट है, जैसे कि यह भौतिक संसार हमारी आँखों के सामने है, और उन्हें इससे कोई दहशत नहीं होती। और उस जीवन का भी वह संचालन भली प्रकार करते हुए जीवात्मा को अगले चरण के लक्ष्य की ओर बढ़ाते हैं। बहुत से ज्ञानियों एवं भक्तों को भी इस स्थिति की चाहत होती है और वे निरन्तर, एक तार में बँधे परमपिता परमात्मा के साथ एकता स्थापित किए रहते हैं। इस स्थिति को वैकुण्ठ, केवल्यम् या मुक्तावस्था कहते हैं।

वैकुण्ठ इन परिलोक
स्क्रिय श्रद्धं जगत पथित
अस्ति विष्णु अमरात्मा
भक्तिर भागा वातिर साह

सर्वोच्च स्वर्ग, वैकुण्ठ, विश्व के स्वामी भगवान विष्णु, जिनकी हम थाह नहीं नाप सकते तथा जो अनन्त हैं, वह वहाँ अपनी पत्नी, भक्त एवं परम भागवतों के साथ वास करते हैं। यहाँ भक्त वे हैं जो भगवान के अंग हैं। वे उनके साथ आनंदित रहते हैं। परम भागवत् वे हैं, जो भगवान का गुणगान करते हैं तथा यश और कीर्ति का प्रचार सब में करते हैं। मुक्त स्थिति निर्गुण स्थिति है। यह सगुण स्थिति से पूर्णतः भिन्न है। मुक्त या librated व्यक्ति हर क्षण सर्वोच्च पुरुष परम पिता परमात्मा के साथ जुड़ा रहता है, एक तार में रहता है। उसके लिये न तो कोई दुःख है और न ही कोई दुःखद परिवर्तन होता है। परम भक्त या परम ज्ञानी के लिये महासमाधि हर्ष और आनन्द का विषय है। वह ईश्वर तक पहुँच रहा है **'अल्लाह मिलन'** इसी कारण से परम भक्त एवं परम ज्ञानी जैसे साईनाथ महाराज के निर्वाण को महासमाधि कहते हैं, क्योंकि वे मृत्यु को भी हर्ष का विषय मानते हैं। वास्तव में उनकी दशा में कोई परिवर्तन नहीं होता।

श्री जी. जी नारके का सन् 1936 का कथन हम दोहराते हैं –

"बाबा आज जिस दशा में हैं,
जब वे शरीर धारी थे, तब भी वे इसी दशा में थे।

और जब वे शरीर–रूप में थे, तब भी वे उसी दशा में थे,
जिस दशा में वे आज हैं।"

पहला महासत्य जो बाबा के भक्तों को महासमाधि – की वर्षगाँठ पर सोचना है, वह यह है कि बाबा में कोई परिर्वतन नहीं हुआ।
वह थे।
वह हैं।
वह हमेशा हमारी अंतरात्मा में रहेंगे।
श्री कृष्ण ने सब आत्माओं के लिए कहा है और साई बाबा जैसे परम भक्त एवं परम ज्ञानियों द्वारा सिद्ध किया जा चुका है।

नत्वेवाहं जातु नामं न त्वं नेमें जनाधिपाः।
न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम।।

ऐसा कोई समय नहीं था, जब मैं नहीं था, जब तुम नहीं थे। और दूसरे (ये राजा) नहीं थे और न ही हम सब कभी भविष्य में समाप्त होंगे।

देहिनोऽस्मिन् यथा देहे कौमारं यौवन जरा।
तथा देहान्त प्राप्ति धीरस्तत्र न मुझति।।

शरीरधारी जीव के लिये बचपन, जवानी और बुढ़ापा ये तीन स्थितियाँ होती हैं और इसके बाद वह नया शरीर धारण करता है। बुद्धिमान एवं हिम्मतवाला आदमी इससे न तो व्याकुल एवं भ्रमित होता है और न ही डगमगाता है।

बाबा ने अपने जीवन का अन्तिम समय किस प्रकार व्यतीत किया, यह तो सब भक्तों को विदित ही है। वह सामान्य रूप से अपने भक्तों के साथ रहे, उनका संरक्षण करते रहे, उन्हें धन या उपहार भी देते रहे और फिर हाड़–मांस की दुनिया से अलग होकर दूसरी दुनिया में सहजता एवं परम शांति से प्रवेश कर गये तथा बुद्धिमान व्यक्तियों के लिये उदाहरण निश्चित् कर दिया कि इस प्रकार उन्हें भी उनके पीछे आना है। बाबा आज भी मौजूद हैं; परन्तु अदृष्य रूप में। इसका यह तात्पर्य नहीं है कि वे अपने भक्तों के लिये कार्यरत नहीं हैं। उन भक्तों ने जो सन् 1918 के दशहरे से पहले जीवित थे और जो उसके बाद उनके भक्त बने, उन्होंने उनके कथन की सत्यता का एहसास किया था। दुःख की बात है कि बहुत से लोगों को गलतफहमी हो गई कि उनके शरीर के न रहने से उनकी मौजूदगी की कमी महसूस होगी। साईनाथ ने स्वयं अपने प्रभाव से यह भ्रम दूर कर दिया। बापू साहब जोग, रोजाना बाबा की

पूजा–अर्चना करते थे, उन्होंने सोचा कि बाबा अब मृत हैं, उनकी आरती करने की आवश्यकता नहीं है। बाबा लक्ष्मण के समक्ष उपस्थित हुए और उसे बताया कि जोग गलतफहमी में हैं और उसे निर्देश दिया कि वह द्वारकामाई जाएँ, जहाँ बाबा का मृत शरीर पड़ा था और वहीं आरती करें। तदनुसार लक्ष्मण ने बाबा के मृत शरीर को दफनाने से पहले उसकी आरती उतारी। बाबा ने संसार से अपने जाने के कई बार संकेत दिये थे, जिनकी यादें भक्तों को समाधि के बाद आईं। छोटे खान ने कहा, बाबा ने कहा था, **"तरबते हूँ दण्डे हवीति"** अर्थात **"मैं अपनी समाधी से कार्यरत रहूँगा"** बाबा ने श्रीमती तारखड़, दामोदर रसाने, उद्दव बुआ एवं अन्य भक्तों को आश्वस्त किया कि महासमाधि के पश्चात् चिंता की कोई आवश्यकता नहीं है। इनमें से हर कोई चिंतित था कि बाबा के जाने के बाद हम बेसहारा हो जायेंगे, बाबा ने आश्वस्त किया, **'तुम जहाँ कहीं भी रहो, तुम्हें केवल मेरा ध्यान करना है और तुम मुझे सहायता के लिये सदा अपने पास पाओगे।'** असंख्य भक्तों को इस सत्य का निजी अनुभव है। श्रीमद् भगवद्गीता में श्री कृष्ण की घोषणा और बाबा की स्वयं की घोषणा में कोई अंतर नहीं है।

श्री एस. बी धूमल के कथन एवं अन्य श्रद्धालू भक्तों के अनुसार–

"बाबा कहाँ चले गये? वे आज भी जीवित हैं और हमारी मदद करते हैं। (महासमाधि के बाद भी)"

कोई भी व्यक्ति बाबा के **'चारटर एंड सेइंग्स',** भक्तों के अनुभव जो **'साई लीला'** मासिक, **'साई सुधा' 'साई सच्चरित्र'** एवं अन्य पुस्तकें बाबा पर पढ़ेगा, उसे इन कथनों की सत्यता पर पूर्ण रूप से विश्वास हो जायेगा। श्री एम. बी. रेगे. ने **'गोस्पल आफ साई बाबा'** नामक पुस्तक की प्रस्तावना में इन **'ब्रह्म सत्य'** वाक्यों को संक्षेप में व्यक्त किया है– **"बाबा भगवान हैं; मेरे लिये वे अभी दुनिया से गये नहीं हैं।"** असंख्य लोग, जो इन वाक्यों पर भरोसा करने का संकल्प कर लेते हैं और साई–पूजा, साई–भजन, साई–ध्यान आदि में शामिल होते हैं, उनको निश्चय ही शांति एवं साई– संरक्षण प्राप्त होगा जैसा कि हमेशा उन्हें मिलता रहा है। अब इस विषय पर और लिखना आवश्यक नहीं है। – विशेषकर उन पाठकों के लिये जिन्होंने पिछले तीन वार्षिक महासमाधि–संदेश पढ़े हैं। इस विशिष्ट संदेश को अब हम विराम देते हैं। अहमदाबाद के वकील श्री चम्पकलाल मानकलाल को, बाबा के द्वारा दिये साक्षात्कार 28.08. 1954 को सुबह उनके स्वयं के अनुभव में:–

"श्री नरसिंह स्वामी को लिखो कि मैं (बाबा) हमेशा अपने भक्तों के समक्ष मौजूद हूँ। मैं ब्रह्मांड के अंत तक सर्वव्यापी शक्ति द्वारा भक्तों का मार्गदर्शन करूँगा।"

यह सर्वोच्च एवं अटल महासत्य ही है जो भक्तगण यदि चाहें तो अनुभव कर सकते हैं। हम साई–भक्तों को यह सत्य अपने आगामी जीवन में सदा याद रखना होगा – जीवन में सम्पन्न होने के लिए और बाबा का संरक्षण पाने के लिए।

नरसिंहम् स्वामी

नौवाँ महासमाधि संदेश

बहुत सारे महासमाधि विवरण लिखे जा चुके हैं – वर्ष–दर–वर्ष इस पुस्तिका तथा अन्य पुस्तकों में भी! इस बार हम इस विवरण को अत्यंत व्यावहारिक एवं संक्षिप्त रखेंगे। **क्या किसी व्यक्ति के लिए यह उचित होगा कि स्वयं को साई–भक्त कहे, यदि उसका चित्त हर क्षण साई में स्थित नहीं है और उसने साई की जीवन–शैली को नहीं अपनाया तथा उसे अपनी जीवन–चर्या का हिस्सा नहीं बनाया।** चलो हम मृत्यु का उदाहरण लेते हैं, जिसका आलिंगन हर व्यक्ति को करना है। बाबा का मृत्यु के प्रति क्या दृष्टिकोण था? बाबा ने अपने चार्टर में वही कहा है जो कृष्ण के रूप में उन्होंने गीता में कहा, कि मृत्यु केवल एक आकार से दूसरे में परिवर्तन का नाम है – दृष्य से अदृष्य में। यदि किसी व्यक्ति का पाप एवं अधर्म का जीवन नहीं बीता, जिसके कारण वह मृत्यु उपरांत सजा का अधिकारी हो, तो हमें कोई कारण नजर नहीं आता कि वह इस जीवन में मृत्यु से डरे। किसी को भी कपड़े बदलने या एक कमरे से दूसरे कमरे में जाने में डर नहीं लगता। प्रार्थना, उपासना धर्म–निष्ठा एवं कठोर आत्म–संयम के नियमों द्वारा हम सब मुक्ति के समीप पहुँच सकते हैं। प्रार्थना हृदय को हलका कर मन में शक्ति, उत्साह एवं पवित्रता का संचार करती है। प्रार्थना शक्तिशाली आध्यात्मिक तंरगों का संचार करती है। प्रार्थना से उत्तम कोई शुद्धि का साधन नहीं है। यह कहा जा सकता है कि प्रार्थना सुबह की चाबी और साँझ का ताला है।

सच्चे हृदय से निकली प्रार्थना ईश्वर की कृपा को वरदान–रूप में प्राप्त करती है। प्रार्थना दिमाग, विवेक एवं बुद्धि को निखारती है। प्रार्थना हमारे मन, मस्तिष्क एवं चित्त को उत्तम पथ पर अग्रसर करती है। प्रार्थना के कारण तर्क–वितर्क एवं अंहकार हमारे मन में आने की हिम्मत नहीं कर पाते। प्रार्थना प्रबल शक्तिशाली आध्यात्मिक बल है। प्रार्थना की पवित्र आध्यात्मिक तरंगे हमारे मन एवं चित्त को शांति प्रदान करती हैं। अगर आप रोजाना प्रार्थना करते हैं तो आप के जीवन में धीर–धीरे परिवर्तन आयेगा और आप भी इस पवित्र साँचे में ढल जाएँगे। प्रार्थना मनुष्य के चित्त एवं अंहकार को शुद्ध करके उसे सात्विकता से परिपूर्ण कर देगी।

जब प्रार्थना की शक्ति से चित्त शुद्ध, पवित्र एवं सात्विक हो जाता है, तब विवेक एवं बुद्धि प्रखर और उत्कृष्ट हो जाती है। प्रह्लाद की प्रार्थना की शक्ति ने ही गर्म तेल को ठंडा कर दिया था। आसक्ति से मुक्त प्रार्थना मोक्ष प्रदान करती है। ईश्वर निराकार है, परन्तु वह अपनी इच्छा से, आपके द्वारा तीव्र उत्सुकता पूर्वक की गई पूजा के कारण, अनेक रूप धारण

कर लेता है। श्रद्धा–विहीन प्रार्थना का कोई लाभ नहीं। जहाँ प्रार्थना है, वहाँ आलस्य का कोई स्थान नहीं है। श्रद्धा–युक्त प्रार्थना अगला कदम दिखाती है। मोक्ष के कठिन मार्ग पर प्रार्थना ही भरोसेमंद साथी है।

प्रार्थना का सर्वोत्तम स्वरूप गायत्री मंत्र है। प्रेम एवं प्रार्थना–विहीन जीवन रेगिस्तान में खड़े सूखे पेड़ की तरह है। पापी, अधर्मी, धूर्त एवं कुटिल व्यक्ति द्वारा की गई प्रार्थना की कोई सुनवाई नहीं होती। कम से कम रोजाना पाँच मिनट प्रार्थना करिये – सुबह उठ कर और रात होने पर, सोने से पहले। पहले सम्पूर्ण विश्व की सुख–शांति एवं समृद्धि के लिये प्रार्थना कीजिए और फिर अपने लिए। रोजाना प्रार्थना की गम्भीरता एवं गहराई में प्रवेश कर ईश्वर से वार्तालाप कीजिए, प्रार्थना दिल की गहराइयों से निकलनी चाहिए। शुद्ध हृदय से निकली प्रार्थना की तुरन्त सुनवाई होती है।

पूजा शुद्ध–सात्विक तथा उत्सुक हृदय की गहराइयों से की जानी चाहिए। प्रार्थना दुःख पीड़ा से मुक्ति पाने के लिए नहीं बल्कि संकट एवं कष्टों को धैर्यपूर्वक झेलने की क्षमता–हेतू शक्ति माँगने के लिए परमपिता परमात्मा से करनी चाहिए। हमें अपनी कमियों एवं दोषो को दूर करने की प्रार्थना करनी चाहिए। प्रार्थना के तीर हर दिशा में हमें चलाने हैं। उनमें से कम से कम एक तो उस परमपिता परमात्मा के हृदय में प्रवेश कर ही जाएगा। हमारा तुम्हारा कर्तव्य तो केवल प्रार्थना करना है। चिंता मत करो कि वह सुन रहा है या नहीं। प्रार्थना पर पूर्ण विश्वास रखो, चाहे कितने भी प्रलोभन हम पर आक्रमण क्यों न करें। हमें प्रार्थना द्वारा एक दुर्गम किले का निर्माण करना है (जिसे सहजता से जीता न जा सके) प्रार्थना ही हमें जीवन में शरण देने वाला विश्वास एवं सहारा है, तथा वही जीवन–रूपी जहाज का सबसे बड़ा लंगर–पतवार एवं मुख्य आधार है।

नरसिंहम् स्वामी

दसवाँ महासमाधि संदेश

इस वर्ष श्री साई बाबा का महासमाधि–दिवस अक्टूबर की 15 तारीख को पड़ रहा है। **'साई सुधा'** पत्रिका का अक्टूबर 1956 अंक पाठकों तक 15 अक्टूबर तक नहीं पहुँच पायेगा। इसलिये हम महासमाधि का संदेश सितम्बर अंक में ही प्रकाषित कर रहे हैं। जैसा कि पहले कई अवसरों पर समझाया जा चुका है, कि साई बाबा की महासमाधि खेद का विषय है ही नहीं। आम गृहस्थ के लिए आत्मा के शरीर से अलग होने को बहुत कष्टदायक समझा जाता है। इस अवसर पर दुःख की कई काव्य रचनाएँ भी उपलब्ध हैं। साई बाबा के लिये शरीर से श्वास का अलग हो जाना न तो बाबा के लिये और न ही उनसें जुड़े जनमानस के लिए कोई खेद का विषय है।

बाबा आत्मज्ञान के सम्पूर्ण ज्ञाता थे। उन्हें केवल कोई पुस्तकीय ज्ञान नहीं, बल्कि सम्पूर्ण आत्मिक ज्ञान था। वे आत्म साक्षात्कार प्राप्त, त्रिकालज्ञ एवं सर्वज्ञानी थे। बाबा की जीवन शैली में उनके व्यक्तित्व की विशिष्ट छाप थी। उन्हें पता था कि वे शरीर नहीं हैं, न उनका कोई बनावटी व्यक्तित्व है, जिसके द्वारा लोग उनके बारे में या फिर वह स्वयं अपने शरीर एवं अपनी गतिविधियों के बारे में कोई विशेष धारणा बनाएँ। उन्होंने कई बार कहा था कि उनके गुरुमुर्शीद उन्हें उनके शरीर से दूर ले गये हैं। अर्थात उन्होंने बहुत समय पहले से यह विचार त्याग दिया था कि वे शरीर हैं, और ऐसी ही धारणा हम स्वयं अपने लिए आज भी संजोये हैं। वे हर समय निरन्तर ईश्वर मे स्थित थे। अल्लाह एवं हरि उनके होठों पर और हृदय में सदा रहता था। उनके शरीर छोड़ने के समय भी यही स्थिति थी। भग्वत गीता के अनुसार वे शरीर छोड़ने पर पूर्ण भगवान या ब्रह्म–रूप हो गए थे। इस बात के विस्तारपूर्वक अनेक प्रमाण दिये जा चुके हैं कि बाबा आज भी ईश्वर–स्वरूप, जीवित, जाग्रत, क्रियाशील एवं प्रभावशाली हैं–

समोऽहं सर्वभूतेशु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः।
ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ने तेष चाप्यहम्।।

भगवान कहते हैं – **'मैं ऋणी जीवों के प्रति समान भाव रखता हूँ। मेरा न तो कोई मित्र है और न ही कोई शत्रु है; परन्तु जो लोग भक्ति–द्वारा मुझ से जुड़ते हैं, वे मुझमें मौजूद हैं और मैं उनमें**। ***'मे भक्त; प्रणष्यति'*** अर्थात **भगवान कहते हैं, 'मेरा कोई भक्त कभी भी समाप्त नहीं होता। सच जानो कि भगवान स्वयं उसकी कुशल– क्षेम देखते**

हैं। बाबा के बहुत सारे भक्त जीवन के हर क्षेत्र में बाबा का संरक्षण अनुभव करते हैं – और अब आवश्यकता नहीं है कि इस महासत्य **"नैरंतिक उपस्थिति"** पर ज्यादा जोर दिया जाना चाहिए कि बाबा महासमाधि के बाद भी मौजूद हैं। भगवान कैसे कहीं जा सकते हैं? और वे जायेंगे कहाँ? वे तो सर्वत्र मौजूद हैं। परन्तु हर कोई बाबा की निरन्तर मौजूदगी और उनके सरंक्षण का लाभ नहीं उठा सकता। भक्त को पहले बाबा के साथ जुड़ना पड़ेगा और उसे कुछ प्रयास करने पड़ेगें, फिर उसे सारे अनुग्रह प्राप्त होने लगेंगे, चाहे वह कर्मानुसार पापी ही क्यों न हों; वे भी बाबा के साथ जुड़कर नए सिरे से जीवन षुरू कर सकते हैं।

आदिसेत् सद्ष्चारो भजते मामनन्य भाक् ।
सधुरेव समन्तव्यः सम्यवव्यव हि सः ।।

इसका अर्थ है कि यदि भीषण पाप किये हों तो भी भगवान वादा करते हैं कि ज्ञान और भक्ति के द्वारा उनके जीवन में परिवर्तन आ जायेगा और वह भक्त और ज्ञानी बन जाएगें। जो कोई भी बाबा के विषय में रूचि रखता हो, वह उनके विषय में पढ़े; उनके भक्तों से मिले, भजन, कथा–पूजा में सम्मिलित हो। वे लोगों को **'भक्ति–लीला'** से अवगत करवाते हैं। यह विशेष पुण्य का कार्य है। पाठकों का ध्यान हम एक बात पर केंद्रित करके यह महासमाधि संदेश समाप्त करते हैं। हम पाठकों को बाबा के साथ अभिन्न रूप से जोड़ना चाहते हैं। जितनी गहनता से आप बाबा से जुड़ेंगें, उतना ही फल आपको प्राप्त होगा। आप ने देखा होगा **'Life of Sai Baba vol I & II'** की, प्रस्तावना में भारत सरकार के पूर्व गृह–मंत्री श्री बी. एन. दातार के अनुसार उनके जीवन के हर पहलू में साई बाबा की छाया है। उसका प्रतिफल है – **प्रसन्नता एवं सफलता**। इस प्रकार आप भी बाबा से जुड़ें एवं इसी प्रकार सफलता, आशीर्वाद एवं अन्य सब–कुछ हर पाठक को प्राप्त हो।

नरसिंहम् स्वामी

प्रथम गुरुपूर्णिमा – संदेश
10 जुलाई, 1949

आज का दिन अत्यंत सौभाग्यशाली है। आज हम अपने सद्गुरु साई एवं अन्य गुरुओं की पूजा–अर्चना कर आनन्द–मंगल महोत्सव मना रहे हैं। श्री साई ने सदैव अपने–आपको भक्तों के अन्य गुरुओं के साथ जोड़कर रखा है। आज, अर्थात गुरु–पूर्णिमा या जेष्ठ–पूर्णिमा, संत अंगरस द्वारा निर्धारित उपयुक्त समय है। हाथों में पूजा–अर्चना की सामग्री तथा हृदय में श्रद्धा–भाव सँजोकर गुरु के पास जाने का उपक्रम गुरु सब स्वीकार करते हैं। गुरु चतुर्मास के दो–चार महीने भक्तों के साथ रहकर उनका मार्गदर्शन करते हैं और इसके अतिरिक्त वे भक्तों में आध्यात्मिकता के प्राण फूँकते हैं। महर्षि व्यास – वेदों, उपनिषदों तथा महाभारत और पुराणों के लेखक अथवा रचयिता हैं, वे आज की पूजा के केन्द्र–बिन्दु तथा आध्यात्मिकता के स्रोत हैं। साई ही व्यास हैं तथा व्यास ही साई हैं– इस एकरूपता का अनुभव उन भक्तों को अवश्य होगा जो अपना सर्वस्व साई को समर्पित कर देंगे। गुरु–पूजा–अर्चना बिना श्रद्धा ध्यान एवं एकाग्रता ठीक उसी प्रकार है, जिस प्रकार बिना घी–दूध–दही के भोजन। औपचारिक पूजा–पाठ के अनुष्ठान का फूल है ध्यान या एकाग्रता तथा इसका फल है – **'सर्वोच्च परमानन्द'।**

मैं सम्पूर्ण हृदय से प्रार्थना करता हूँ कि साई आपके एवं सबके हृदय में प्रवेश कर आपको सामर्थ्य दें कि आप रोजाना या नियमित रूप से समय–समय पर धर्म–ग्रन्थों का अध्ययन करें। आप सब ध्यान एवं एकाग्रता द्वारा परमानन्द की अनुभूति प्राप्त करें।

नरसिंहम् स्वामी

द्वितीय गुरुपूर्णिमा संदेश
10 जुलाई, 1950

गुरु पूजा–अर्चना के लिए सभी पूर्णिमाएँ दिव्य एवं पवित्र मानी जाती हैं। इनमें आषाढ़–पूर्णिमा विशेष महत्त्वपूर्ण है। इसे व्यास–पूर्णिमा अथवा गुरु–पूर्णिमा भी कहते हैं। महाभारत, भगवद्गीता तथा पुराणों के रचयिता महर्षि वेद–व्यास सब गुरुओं के गुरु के रूप में **'प्रथम गुरु'** अथवा **'प्रधान गुरु'** माने जाते हैं। इस दिन से दक्षिणायन का प्रारम्भ माना जाता है, इसीलिए महर्षि वेद व्यास की पूजा–अर्चना से इसदिन का आरंभ माना जाता है। इसके बाद ऊर्ध्वगामी अन्य गुरुओं की एवं उपासक के निजी गुरु की पूजा–अर्चना का विधान है। सन्यासियों एवं आचार्यों को वर्षाकाल भ्रमण के लिए कष्टदायक प्रतीत होता है। वे किसी भी क्षेत्र के निवासियों से चर्तुमास में रहने की आज्ञा ले सकते हैं। क्षेत्रीय निवासी धार्मिक आचार्यो को आदर–सत्कार देकर दो–चार महीने उनके सतसंग एवं सान्निध्य से लाभान्वित होते हैं। आचार्य या गुरु भक्तों को आत्मज्ञान जैसे महत्वपूर्ण विषय पर, जिसमें पूजा, योग, ध्यान, नैतिकता, आत्मिक अनुभूति तथा दर्शनशास्त्र आदि शामिल हैं, व्यक्तिगत एवं सामूहिक मार्गदर्शन देते हैं।

हर साई–भक्त से यह आशा की जाती है कि वह साई से तथा अन्य गुरुओं से यदि उसके हों, तो उनके साथ इस दिन से कम–से–कम चतुर्मास तक तो अवश्य जुड़ जाए। साई बाबा की पहचान धर्मगुरु या मोक्ष–गुरु के रूप में तो निश्चित् है। बाबा अपने भक्तों को आत्मा की ऊँचाइयों तक पहुँचाने के लिए तैयार करते हैं। आध्यात्मिक साधनाएँ, जो हमे जीवन में बहुत पहले शुरू कर देनी थीं, उन्हें शुरू (पुनः आरंभ) करके कम–से–कम प्रशिक्षण अवधि तक यानी चतुर्मास के दौरान तो अवश्य ही जारी रखना हैं। जीवन की वास्तविकता का गम्भीरता से सामना करते हुए कर्मठता द्वारा जीवन का सर्वस्व एवं सर्वोत्तम जो व्यक्ति को हासिल हो सकता है, वह बाबा से पाना है। 'यहाँ 'सर्वस्व' एवं 'सर्वोत्तम' का अभिप्राय सम्पत्ति, स्वास्थ्य, संतान–सुख एवं सफलता तक सीमित नहीं है। जीवन का सर्वोत्तम उद्देश्य परमानंद एवं आत्मानुभूति का क्षण है। भक्ति, आत्मज्ञान, योगनिष्ठा आदि के द्वारा भक्तों का वास्तविक कल्याण होता है। हर साई–भक्त को रोजाना कुछ समय इन साधनाओं को देना है। इस चतुर्मास काल के समाप्त होने के पश्चात् यदि भक्त को अपने अंदर आध्यात्मिक स्तर पर कोई परिवर्तन नज़र नहीं आता तो संदेह करना होगा कि अवश्य ही साधना के दौरान साधक से कुछ गलत हुआ होगा। साई से तो कुछ गलत नहीं

होता। वे तो हर क्षण अपनी असीम अनुकम्पा एवं स्नेह अपने उन उत्साही भक्तों पर लुटा रहे हैं, जो उनके पास सही तरीके से जाते हैं।

मेरी हर साई–भक्त से विनम्र प्रार्थना है कि वह गुरु–पूर्णिमा के इस पर्व पर ध्यान दें ताकि यह काल (चतुर्मास) उन्हें विशेष आध्यात्मिक उपहार दिए बिना व्यतीत न हो जाए। बारह महीने पहले जो संदेश मैंने आपको दिया था, उसके आधार पर हर साई–भक्त अपना मूल्यांकन करे –

1. क्या हमने अपने उद्‌देश्य को पाने का रास्ता तय किया है?
2. क्या हमने इस दिशा में कुछ ठोस कदम उठाये हैं?
3. यदि उठाए हैं तो हमें कितनी सफलता प्राप्त हुई है?

कुछ लोगों की यह मान्यता है कि जीवन में **'मृत्यु का भय'** ही एक मूल कारण है जो हमें इस गम्भीर विषय पर सोचने को विवश करता है। युवा वर्ग को इस गंभीर विषय पर आत्मनिरीक्षण करने की आवश्यकता नहीं है। ऐसा सोचने वालों को हम याद दिलाना चाहते हैं कि मृत्यु केवल वृद्ध लोगों के ही पीछे नहीं पड़ी है, मृत्यु की तलवार इस धरती पर जन्में हर प्राणी या जीव–जंतु पर हर क्षण लटक रही है –

अंहनी अंहनी भूतानी।
गच्छन्ती एवा यमाल्यम,
सेशाह स्थिवरम इच्छति
किम अच्छारयाम अतः परम

अर्थात दिन–प्रतिदिन इस धरती पर जन्में जीव मृत्यु के मुख में समा रहे हैं। जो जीवित हैं उनके आचरण तथा उनकी चेष्टाओं से ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने मृत्यु पर विजय प्राप्त कर ली है। यह बात कितने आश्चर्य की है? वास्तविकता यह है कि कुछ सीमा तक अनुभवहीनता उत्साही जिज्ञासु मानव स्वभाव में प्राकृतिक होती है, जिसका उद्‌देश्य प्रतिदिन के सांसारिक काम–काज चलाना होता है, परन्तु आध्यात्मिक उन्नति में यह कड़ी बाधा है। सात्विक एवं उच्च राजसिक व्यक्तियों के लिए यह उचित होगा कि वह अकसर इस अनुभवहीनता से ऊपर उठकर, जीवन की यथार्तता (सच्चाई) उसके खतरों एवं उसकी संभावनाओं और भावी जीवन के लिए संचित कर्म–भोगों के खजाने पर अपना ध्यान देना

आरंभ करें।

यहाँ हम साई–भक्तों से अपेक्षा करते हैं कि, वे आदर्श रवैया अपनाएँ और अपने आप को जीवन की व्यर्थता की दलदल में डूबने न दें। विशेष स्थिति, जिसमें कि व्यक्ति की प्रतिष्ठा को धब्बा लगने की गुंजाइश हो, या फिर इससे बुरी दशा, जिसमें हम तीव्र उत्सुकता से भौतिक सुख–साधनों के पीछे भागें और अपनी अन्तर्रात्मा की छोटी–सी पुकार को भी न सुन पाएँ तथा अपने आपको भौतिकता में डूबा दें।

एक क्षण रूककर, हम इस गंभीर विषय पर विचार करते हैं कि क्या कारण है कि कुछ लोग इस आत्मचिंतन (आध्यात्मिक स्थिति एवं प्रगति) के विषय पर अपरिपक्वता बरतते हैं तथा कुछ लोग इस विषय पर गम्भीरता से सोचते हैं? हम पाते हैं कि इसके अनेक कारण हैं।

भौतिक व्यर्थता से ऊपर उठने की आकांक्षा रखने के प्रमुख कारणों पर वातावरण का प्रभाव होता है। इसमें विशेषतः उस व्यक्ति का प्रभाव अधिक महत्वपूर्ण है, जिसके आचरण एवं चरित्र का हमारे जीवन पर प्रभाव पड़ा हो और पड़ रहा हो। उसका इस मसले में प्रारंभिक प्रभाव अधिक महत्वपूर्ण है तथा जिसकी प्रेरणा बचपन तथा युवावस्था में, घर के भीतर और बाहर, बड़ों के आचरण तथा व्यवहार में झलकती है। इन सभी प्रभावशाली कारणों पर ध्यान देने पर हम पाते हैं कि इन सबमें महत्वपूर्ण है **'गुरु का प्रभाव'**। हर ध ार्मिक प्रवृत्ति का व्यक्ति हम पर असर डालता है, परन्तु उनमें से एक सच्चे साधक से आज नहीं तो कल जुड़ना या उसे चुनना पड़ता है। साईबाबा के अनुसार गुरु **'ऋणानुबंध द्वारा प्राप्त होते हैं।'** वह गुरु जो हमारी पिछले जन्म में मदद कर रहा था, वह इस जन्म में हमें निराश्रित नहीं छोड़ सकता। वही हमें अपने प्रभाव से आकर्षित करता है। इस कारण हर उत्साही भक्त को यह याद रखना अति आवश्यक है कि वह आज फिर पुराने ऋणानुबंध द्वारा समर्थ सद्गुरु साईनाथ से जुड़ रहा है। इस जन्म में साईनाथ से जुड़ने का कारण चाहे जो भी हो, अब साई–भक्तों के समूह में शामिल होने में ही उसकी भलाई है।

भौतिक जगत की यात्रा सुख–सुविधा से सकुशल पार करना, आध्यात्मिक प्रगति एवं संरक्षण के साई ही पतवार हैं, (Sheet anchor) अब भक्त के पास और कुछ नहीं रह जाता, इसलिए उचित है कि उसके पास जितना भी समय बचा है, उसमें जी–जान से अपना मज़बूत सम्पर्क बाबा के साथ बनाएँ। इस मामले में अनमने मन से किया गया प्रयास

समय और शक्ति को क्षीण करता है। बाबा के साथ श्रद्धा, विश्वास और उत्साहपूर्वक किये गये सर्म्पक द्वारा आपकी लौकिक एवं आध्यात्मिक स्थिति में सुधार प्रतीत होगा तथा आपके व्यवहार, चित्त और चिंतन को ऊँचा उठा कर आपकी क्षमता एवं उपलब्धियाँ बढ़ा देगा, जो आपके ध्येय को प्राप्त करने के लिए आवश्यक हैं। साई ने स्वयं इस मामले में अनमने मन से की गई शुरूआत को निरुत्साहित किया है। बाबा ने आरोप लगाया है कि कुछ लोग कोई जप–साधना नहीं करते; परन्तु बाबा के सम्पर्क में आने के बाद उनकी स्थिति में सुधार हो जाता है। नाना साहब चंदोलकर, एच. एस. दीक्षित, उदद्व बुआ, मानेकर आदि अनेक लोगों ने बाबा के साथ अंतरंग सम्पर्क द्वारा जीवन में प्रगति की है। आप सब में से हर एक आज भी जो हिम्मत जुटाकर तहे दिल से बाबा से जुड़ेगा, उसे बाबा इनसे भी अधिक सुविधाएँ एवं प्रेरणाएँ देकर उसका स्वागत करेंगे। श्री साई बाबा दुनिया से गए नहीं हैं, वह कृपापूर्वक भक्तों के बीच मौजूद हैं। आपको केवल बाबा का ध्यान करना है। कहीं भी, और कभी भी, किसी भी समय, बाबा आपको अपनी मौजूदगी का अहसास कराते हैं। यह हमारा गौरवपूर्ण चार्टर है, और यह हमारा घोषणा पत्र है। इस घोषणा पत्र की छाँव में रहने का हम सबका एक समान अधिकार है।

अब मैं आप सब को ध्यान दिलाता हूँ कि हर अधिकार के साथ कर्त्तव्य जुड़ा है। जब आप सब के पास बाबा की मदद से ऊपर उठने का अधिकार तथा अवसर है तो यह आपकी निष्ठा, आपके प्रयास एवं ईश्वर–कृपा पर निर्भर है कि आप इस सुनहरे अवसर का पूर्ण लाभ उठाएँ तथा अपने को उस ऊँचाई तक ले जाएँ, जहाँ तक आप जा सकें। इसका तात्पर्य यह हुआ कि साई जो रास्ते खोलेगें, वह हर भक्त के लिए भिन्न–भिन्न हो सकते हैं। व्यक्ति, जो साधना पहले से कर रहा हो, वह उसे जारी रखे तथा बाद में जो बताई जाए, वह भी करे।

हमें साई को मजबूती से थामना है। साई–भाव एवं साई–तत्व को अपने में समाना है। **'आप जो सोचते हैं, वही आप बनते हैं,'** इस सुनिश्चित् सत्य का प्रमाण दुनिया के सब धर्मों में समाहित है तथा यह गुरु–शिष्य– परम्परा तक सुरक्षित है। जिस प्रकार जीसस क्राइस्ट ने अपने शिष्यों के लिए अपनी जान कुर्बान कर दी, उसी प्रकार साई अपना आध्यात्मिक स्वरूप अपने भक्तों पर न्यौछावर कर रहे हैं, ताकि हर भक्त उसे ग्रहण कर सके। गुरु–पूर्णिमा ही साई में लीन होने के लिए सर्वोत्तम दिवस है। यह सब तभी सम्भव है, जब आप धर्मशास्त्रों द्वारा निर्धारित एवं अभीष्ट मार्ग पर ध्यानपूर्वक, श्रद्धापूर्वक उत्साहित होकर चलेंगे, तभी आप निश्चित ही इन सब अनुष्ठानों द्वारा साई–तत्व को ग्रहण कर सकेंगे। हमारे

देश में हर शिष्य गुरु–पूजा करता है जो गुरुओं से दीक्षा लेता तथा आध्यात्मिक पथ का अनुसरण करता हैं। साई केवल चमत्कार करने वाला या लौकिक सुख–सुविधा की पूर्ति करने वाला तत्व नहीं है, परन्तु यह भी सत्य है कि लौकिक सुख–सुविधाओं से आकर्षित हो झुंड–के–झुंड मंदिरो में जाते नज़र आते हैं। बाबा के अनुसार भौतिक सुख–सुविधाओं के द्वारा वे लोगों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। बाबा से जुड़ने के बाद भौतिक तथा आध्यात्मिक दोनों उपलब्धियाँ उन्हें प्राप्त होने लगती हैं।

मैं हर साई–भक्त से विनती करता हूँ कि वह गुरु–पूजा करे अथवा गुरु–पूजा में शामिल हों। – जहाँ भी शास्त्रों द्वारा निर्धारित गुरु–पूजा उत्तम तरीके से हो रही हो। यदि भक्तों के पास इस प्रकार की सुविधा या इसके बराबर का कोई अन्य विकल्प न हो तो ऐसे साई–भक्तों के लिए उत्तम होगा कि वे पूरा दिन साई–चिंतन में व्यतीत करें। भक्त का मन, वाणी और कर्म साईमय हो जाए। वे साई के नाम पर उपहार दे सकते हैं; अन्नदान कर सकते हैं तथा साई नाम का जाप कर सकते हैं। साई–पूजा एवं साई–भजन कर सकते हैं। अन्य लोगों को साई के विषय में बता सकते हैं तथा अपने–आपको साई में डूबो देने का प्रयास कर सकते हैं। अपने हृदय में साई–शक्ति को महसूस करने के कई तरीके हैं – जैसे साई–भजनों को गुनगुनाना तथा साई नाम को अपने मन में दोहराते रहना। एक और आसान विकल्प है – साई–मंदिरो एवं भजनों में जाना। पूरा दिन या आधा दिन उपवास रखा जा सकता है, या फलाहार किया जा सकता है। आधी रात या अधिक रात तक साई–जागरण भी किया जा सकता है। इस तरह गुरु–पूर्णिमा–दिवस उत्तम तरीके से मनाया जा सकता है। यह भक्तों के लिए नये वर्ष में प्रवेश करने के समान है। भक्त ने अपने अंदर साई डाइनुमा से काफी ऊर्जा भर ली है तथा आने वाला वर्ष साई से और भी सम्पन्नता से जुड़ने में व्यतीत करना है। साई के भजन, ध्यान और पूजा पाठ में अधिक समय व्यतीत करना है। इन सबके भी ऊपर है अपने क्रोध, अहंकार और लोभ को साई के चरणों में अर्पित कर त्याग देना तथा अपने आप को साई को समर्पित कर देना। यह दृढ़ संकल्प करना कि बाबा द्वारा दिए गए हर सूत्र का प्रयोग करने पर हमारी आध्यात्मिक सुरक्षा एवं प्रगति सुनिश्चित है।

18 जुलाई, 1951

साई की कृपा एवं आशीर्वाद द्वारा सबकी आज 18 जुलाई 1951 की गुरु–पूजा सफल हो तथा आप सबकी गुरु– भक्ति में प्रतिदिन वृद्धि होती रहे।

ओ व्यास! ओ साई!! ओ सर्वोच्च शक्तिमान!!!– जो हमारे आध्यात्मिक मार्गदर्शक, सरंक्षक एवं हमारे संवर्धक हैं, वे आज अवतरित क्यों नहीं हो रहे हैं? क्या धरती माता की कोख बांझ हो गई है जो व्यास जैसे मुनि तथा भृगु जैसे ऋषि आज दिखाई नहीं देते? क्या किसी में कोई प्रतिभा अथवा योग्यता शेष नहीं रही जो वह साहित्य, विज्ञान, दर्शन, धर्म एवं वास्तविक सत्य का समावेश कर जीने का नया दृष्टिकोण प्रस्तुत करे। ऐसा उद्देश्य–बिंदु जिसपर हमारा जीवन आधारित हो? मैं अपेक्षा करता हूँ कि आप में से कुछ ऐसे निकलें जिनके हृदय में मेरी भाव–भीनी प्रार्थना समा जाए और वे इस पर मुक्त हृदय से विचार करके उच्चतर भावों का अनुसरण करें।

नरसिंहम् स्वामी

तृतीय गुरुपूर्णिमा–संदेश
7 जुलाई, 1952

आषाढ़–पूर्णिमा इस वर्ष 7 जुलाई, 1952 को पड़ी थी, जिसे 'गुरु–पूर्णिमा' अथवा 'व्यास–पूर्णिमा' के नाम से जाना जाता है। व्यास जी चारों वेदों और अट्ठारह पुराणों के साथ–साथ महाभारत के भी रचयिता हैं। सब गुरुओं में प्रमुख व्यास जी की सर्वप्रथम पूजा की जाती है और इसके पश्चात् अन्य गुरुओं की। अन्त में अपने सदगुरु की पूजा अभीष्ट है। इस पूजा का अर्थ एवं उपयोगिता क्या है? पूजा–पाठ में भावुकता ही प्रधान होती है, इस प्रश्न पर बुद्धि–संगत या तर्कसंगत विचार–विमर्श शायद ही कोई करता हो; परन्तु कुछ व्यक्तियों में पूजा–पाठ के प्रति विशेष मानसिक प्रतिरोध एवं भावशून्यता देखी जाती है तथा वे इसमें एक विशेष संयमी गर्व महसूस करते हैं। ऐसे व्यक्यिों के साथ तर्क एवं वादविवाद न करना ही उत्तम विकल्प है। इसके लिए उपयुक्त समय की प्रतीक्षा ही उचित है। ऐसे व्यक्तियों को कालचक्र स्वयं ही परास्त कर देता है। ऐसे व्यक्तियों के जीवन में दुर्भाग्य एवं परेशानियाँ ही आंतरिक परिवर्तन लाती हैं और वे सन्त, सद्गुरु एवं ईश्वरीय शक्तियों के प्रभाव में आने लगते हैं। जीवन के किसी चिरस्मरणीय ऐतिहासिक अवसर पर संत, सद्गुरु या ईश्वर के प्रति श्रद्धा तथा भावपूर्ण समर्पण का वास्तविक अनुभव, किसी अदृश्य सामाजिक तथ्य के रूप में होता है, जैसे कि किसी ज्ञानवान व्यक्ति से सम्पर्क, अनुवांशिक या किसी अन्य अदृश्य प्रभाव द्वारा। इसके पश्चात् विश्वास द्वारा विश्वास की वृद्धि, पुष्टि तथा लाभ होता है। जिन व्यक्तियों के पास पूजा–पाठ करने की प्रेरणा एवं प्रवृत्ति है, उन्हें यह पूछने की आवश्यकता नहीं है कि, पूजा का अर्थ और महत्व क्या है। यह उनके स्वभाव या प्रवृत्ति में है। किसी के अंतर्मन की प्रवृत्ति को चर्चा अथवा तर्क द्वारा उचित नहीं ठहराया जा सकता, क्योंकि यह मानव–स्वभाव का अन्तिम चरम एवं सूक्ष्म दृष्टिकोण है, जहाँ पर इसके महत्व की परख एवं उपयोगिता स्वयं सिद्ध हो जाती है।

जिन व्यक्तियों को पूजा–पाठ की आदत है। उनमें गुरुपूजा की प्रवृत्ति कभी–न–कभी अवश्य जागेगी, तब एक परेशानी अवश्य खड़ी हो जायेगी कि उन्हें गुरु को देव मानना है या नहीं और गुरु–पूजा करनी है या नहीं। जो लोग विभिन्न धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन करते हैं, उनके लिए यह विशेष चर्चा का विषय है। वे लोग कुछ विचार ईसाइयों के तथा कुछ तथ्य मुसलमानों के पकड़ कर हिन्दू समुदायों पर लागू करने लगते हैं। ऐसे लोग जब अपने मन–मस्तिष्क में संचित असंगत विचारो की श्रृंखला को तर्क द्वारा अध्यात्म से जोड़ते

हैं, तो परेशानी का अनुभव करते हैं। ईसाई एवं इस्लाम धर्म में ईश्वर की निराकार आराधना का सिद्धांत विशेष महत्व रखता है। जेहोवा को अपने साम्राज्य के आसपास कोई भी प्रतिद्वन्द्वी बर्दाश्त नहीं। जेहोवा के हर सच्चे उपासक को किसी अन्य चिह्न या व्यक्ति की बाधा सहन नहीं, जो साधक और जेहोवा में ध्यान कम करें। यह सिद्धांत इस्लाम और ईसाई धर्म में एकेश्वरवाद या अद्वैतवाद के रूप में प्रचलित है। यदि हम धर्मों का मनोवैज्ञानिक निरीक्षण करें तो हम पाएँगे कि इस एकेश्वरवाद के सिद्धांत को समझना आसान नहीं है। श्री स्पीयरमैन की पुस्तक 'साइकोलॉजी डाउन द एजिज़' में पूरा एक खण्ड 'सामंजस्य के सिद्धांत को समर्पित है। इस पुस्तक में कुछ लेखकों के उद्धृत विचारों के अनुसार एकात्मकता (unity) न तो कोई तथ्य है और न कोई सम्भावना ही है, वरन् एक प्रवृत्ति या झुकाव है; एक तुलनात्मक विचार है और इसे समझना आसान नहीं है।

मानव–मस्तिष्क एक समय में केवल एक ही विषय पर सोचने में अक्षम है। एक छोटा–सा विचार भी दो–तीन तत्वों का मिश्रण होता है। मस्तिष्क को एक विचार निश्चित करने के लिए इन सब तत्वों के बारे में सोचना पड़ता है। मानव मस्तिष्क में बहुत से तत्वों पर एक साथ सोचने की क्षमता है। मोटे तोर पर एक आम मानव–मस्तिष्क एक समय में छह विचारों पर एक साथ सोच सकता है। ईश्वर के विषय में विचार करना भी एक प्रवृत्ति है। कुछ लोग अपने आस–पास के ब्रह्माण्ड पर चिंतन–मनन करके उसका विश्लेषण कम–से–कम शब्दों में करने की कोशिश करते हैं। इस ब्रह्माण्ड की प्रवृत्ति है कि वह मूल स्रोत पर पहुँचने के लिए अपनी विविधता को कम करने की चेष्टा करता है। तब वह उस एक मुख्य स्रोत पर पहुँचता है जो सब अस्तित्वों का स्रोत है। वही परमेश्वर है।

यतोवा इमानी भूतानी जयंते
येन जतानी जीवन्ती
यत प्रेयन्ति अभिस्वस्मति तद ब्रह्म

भाव यह है कि ईश्वर वह स्वरूप है, जिससे समस्त जड़–चेतन उत्पन्न होते हैं, और उसी में विलीन हो जाते हैं। इसीलिए एकता की तरफ झुकने की प्रवृति ही ईश्वर–सम्बन्धी विचार का मुख्य आधार है। ऊपर बताया गया ईश्वर–सम्बन्धी विचार कोई सहज या पूर्ण विचार नहीं है, यह तीन में से एक और एक में तीन के समान है। आप की भलाई इसी में है कि आप इस तथ्य को अधिक तूल न दें तथा दूसरे धर्मों की निंदा अथवा उनसे नफरत न करें।

ईश्वर के पास असीम शक्तियाँ तथा मानव के पास सीमित शक्तियाँ हैं। ईश्वर के पास असीम क्षमताएँ हैं और मानव के पास कुछ अच्छे गुण किन्तु अगणित कमियाँ हैं। ईश्वर के पास असीमित शक्तियों के साथ–साथ असीम अनुकम्पा एवं दयालुता है जो मनुष्य का उद्धार करतीं है। वही कठिनाई के समय उसकी मदद करती है। ईश्वर निश्चय ही सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञाता, सर्वव्यापक तथा प्रेम से परिपूर्ण है। इन विचारों तक पहुँचने के लिए मानव–मात्र को उन दिव्य आत्माओं, पैगम्बरों, साधु–संतों एवं सद गुरुओं की सहायता अपेक्षित है जिनसे ये श्रेष्ठाएँ प्रकट होती हैं और वे मानव को अनुगृहीत करते हैं जो उन विशिष्टताओं को पाने के उददे्श्य से उनके पास जाते हैं। यह निश्चित सत्य है कि मानव द्वारा एवं मानव की श्रेष्ठताओं द्वारा ही ईश्वर के विचार का जन्म हुआ। निश्चय ही मनुष्य ही उसकी सर्वश्रेष्ठ और सर्वपूर्ण सृष्टि है। और वही ईश्वर का पूर्ण स्वरूप है। इनमें से जो व्यक्ति ज्ञान और प्रकाश के स्त्रोत थे तथा अंधकार के नाशक थे, वे गुरु कहलाए। गुरु का अर्थ है सबसे बड़ा और सबसे परिपूर्ण। गुरु का अर्थ है अंधकार (अज्ञान) का नाशक, चाहे वह आध्यात्मिक हो या बौद्धिक। अतः यह सत्य है कि मानव जाति के लिए ये प्रकाश के स्तम्भ हैं और गुरु देव के रूप में पूजे जाते हैं और इसीलिए गुरु–पूजा आरंभ हुई होगी। इसके बाद मानव–जाति के विभिन्न समूहों में पूजा का विस्तार हुआ होगा और वह बढ़ते–बढ़ते विविध रूप लेता हुआ धर्म और पूजा के रूप तक पहुँचा।

हर समझदार व्यक्ति के लिए उचित होगा कि वह दूसरे धर्मों, प्रथाओं अथवा नियम–सिद्धांतों का खण्डन न करें। धर्म–परिवर्तन करने वालों का भी प्रतिवाद नहीं करना है। एक ईश्वरवादी को सर्वेश्वरवादी विचारों एवं प्रथाओं का सम्मान करना चाहिए। सर्वेश्वरवादी के लिए गुरु–पूजा उत्तम साधना है। पाश्चात्य संस्कृति के लोग इस विचार से अपरिचित होंगे। उनके अनुसार 'गुरु एक व्यक्ति है, जिसे देखा या सँभाला जा सकता है; जबकि ईश्वर दिखाई नहीं देता। उसके साथ किसी भी तरह का व्यवहार–बर्ताव करना मुश्किल है। इस कारण गुरु भगवान नहीं हो सकता।' ऐसे तर्क–शास्त्रियों को बताना पड़ेगा कि मानव–स्वभाव एवं प्रकृति तर्क–सिद्ध नहीं की जाती। विभिन्न प्रकार के वास्तविक अनुभवों के आधार पर मानव–प्रकृति का विकास होता है। जब हम अपने अनुभव–प्रसूत निष्कर्षों को मिलाजुलाकर कोई सार–विचार बनाने की कोशिश करेंगे तो गलत परिणामों पर पहुँच सकते हैं। हमें अपने निष्कर्षों को समय–समय पर अनुभवों के आधार पर परखना होगा। इतिहास साक्षी है कि अनेक श्रेष्ठ आत्माओं के नाम हमें गुरु–शिष्य परम्परा से जुड़े मिलते हैं, तथा गुरु–पूजा द्वारा उसके श्रेष्ठ परिणाम दिखाई देते हैं। श्री

रामकृष्ण परमहंस इसके श्रेष्ठ उदाहरण हैं। श्री चैतन्य, और निवृति आदि इसके अनेक उदाहरण हैं। कबीर तथा श्री साई बाबा इसके श्रेष्ठ उदाहरण हैं, यह सिद्ध करने के लिए कि गुरु–पूजा कितनी महत्वपूर्ण है तथा इन श्रेष्ठ आत्माओं की आध्यात्मिक साधना को प्रतिपादित करने में उसका क्या योगदान है। बाबा ने यहाँ तक कहा था कि 'हमें किसी और साधना की आवश्यकता नहीं! केवल गुरु ही हमारी साधना है'। उनके अनुसार आत्मसमर्पण एवं असंदिग्ध विश्वास गुरु द्वारा उच्चारित हर शब्द में निहित है। इसका परिणाम है अनुकरणीय जीवन, मानवता की सेवा में लगा परिपूर्ण जीवन। वह जीवन जो एक सिद्ध व्यक्तित्व में परिवर्तित हो जाता है तथा जिसका उद्देश्य केवल मानवमात्र की सेवा है।

बाबा के पास असीम शक्तियाँ थीं, जिनके द्वारा वह जान लेते थे कि देश के दूर–दराज इलाकों में कब और कहाँ क्या कुछ हो रहा है। बाबा अपनी शक्ति द्वारा भक्तों पर नजर रखते थे और जरूरत पड़ने पर हस्तक्षेप कर भक्तों की मदद भी करते थे। एक उदाहरण दिया जा सकता है – एक बार एम. डब्लू प्रधान मुम्बई हाईकोर्ट में गिर पड़े। वहाँ शिरडी में बाबा ने कहा, "क्या प्रधान आ रहा है?" इसका अर्थ है, 'क्या प्रधान मर गया है?' गुरु के हस्तक्षेप द्वारा (यहाँ हस्तक्षेप दिखाई नहीं दे रहा) प्रधान उठता है और अपने घर जाता है। शिरडी से कुछ लोग गए थे यह देखने के लिए कि प्रधान को क्या हुआ है? वे लोग आश्चर्य–चकित रह गए यह जानकर कि, जिस समय प्रधान मूर्छित हुए थे, उस समय, बाबा को पूरी खबर थी, और उन्होंने सबके सामने घोषणा की थी कि 'सब ठीक होगा'। यह दृष्टांत हमारे सद्गुरु की शक्तियाँ दर्शाता है और यह भी कि किस प्रकार वे इन शक्तियों का प्रयोग उन भक्तों की भलाई के लिए करते हैं जिनको वे चाहते हैं, और वे सदैव भक्तों के भौतिक एवं आध्यात्मिक भविष्य पर निगाह रखते हैं। यदि उनके पास असीम शक्तियाँ एवं स्नेह है तो उन्हें गुरुदेव कहने में क्या हर्ज है और गुरुपूजा में क्या एतराज है? कुछ लोग इसका यह जवाब देंगे कि यदि बाबा जैसे समर्थ सद्गुरु हमारे रक्षक हैं तो गुरुपूजा की क्या आवश्यकता है? गुरु पूजा या किसी अन्य मसले पर बाबा की सलाह है कि 'आप अपने गुरु से तर्क–वितर्क न करें। यदि उनके पास इस प्रकार की सिद्धियाँ न भी हों तो भी।' बाबा ने कहा– 'तुम्हारे गुरु के पास यदि चमत्कारिक शक्तियाँ न हों जैसे कि अन्य गुरुओं के पास हैं तो भी, तुम अपने गुरु से जुड़े रहो, उनको समर्पित रहो, तुम्हें अपने समर्पण एवं श्रद्धा का फल अवश्य प्राप्त होगा।' गुरु–भक्ति का यह सत्य तथ्य है कि तुम्हें अपनी श्रद्धा का फल अवश्य प्राप्त होगा।

गुरु द्रोणाचार्य ने एकलव्य को अपना शिष्य स्वीकार नहीं किया, परन्तु एकलव्य ने

अपनी श्रद्धा–भक्ति द्वारा गुरु द्रोणाचार्य की मिट्टी की मूर्ति से वही फल प्राप्त कर लिया जो सशरीर अर्जुन को प्राप्त हुआ। गुरु रामनंद द्वारा कबीर को मुसलमान समझ कर दीक्षा देने से मना करने पर कबीर की श्रद्धा–भक्ति ही काम आई। जिस रास्ते से गुरु रामानंद भोर होने पर गंगा–स्नान करने जाते थे, कबीर उस पर लेट गए। जैसे ही अँधेरे में गुरु रामानंद का पैर कबीर पर पड़ा तो गुरु रामानंद के मुँह से निकला, 'राम–राम कह, बच्चा राम–राम कह'। यह प्रसंग केवल निर्णायक निष्कर्ष पर पहुँचने का आधार नहीं है। यह गुरु–भक्ति का निष्पक्ष, आत्मनिष्ठ, विषयगत, तटस्थ उद्देश्य है। गुरु की असीम शक्तियों का, हाड़–माँस के शरीर द्वारा उपयोग होता है। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण बाबा ने कई बार दिया तथा अन्य उच्च कोटि के जाने–माने गुरुओं द्वारा दिया जाता रहा है। हस्त–दीक्षा एवं कर्म–दीक्षा का भक्त के शरीर एवं आत्मा पर गहरा प्रभाव पड़ता है। गुरु एवं गुरुओं द्वारा दी गई दीक्षा का सीधा परिणाम है –**'शक्तिपात–**

अब हम विचार करते हैं कि शिष्य को प्रभावित करने के लिए किस हद तक इस भौतिक शरीर द्वारा गुरु की मौजूदगी सहायक होती है? हम विश्वास पूर्वक कह सकते हैं कि 'दैहिक गुरु' के सानिध्य में भक्त का हित निश्चित है; परन्तु इस विषय को सामान्य रूप देना उचित नहीं है। कुछ लोग कभी–कभार कहते हैं कि हमें मृत गुरु की आवश्यकता नहीं है। एक वैष्णव महिला ने एक बार अखिल भारतीय साई–समाज के अध्यक्ष से कहा, "तुम मृत गुरु का धर्मप्रचार क्यों कर रहे हो।, हमें एक जीवित गुरु क्यों नहीं प्रदान करते? अध्यक्ष द्वारा उस महिला को बाबा की महासमाधि उपरान्त आज भी जारी संरक्षण, निगरानी, शक्ति एवं स्नेह के अनुभवों से अवगत कराया गया। उसकी दुविधा दूर हो गई और उसे संतोष हो गया। अब एक और प्रश्न जो प्रायः सुनाई देता है – 'क्या मुझे गुरु मिल सकता है? मोक्ष गुरु? जो मुझे प्यार करे और मेरे पीछे ऐसे पड़े कि वह मुझे शिकार की तरह खदेड़ता हुआ स्वर्ग तक ले जाए?' साई ही (Hound of Heaven) वह गुरु है जो हमें स्वर्ग तक खदेड़ता हुआ ले जाएगा।

बाबा ने अनेक लोगों से कहा था कि वे उनके पिछले जन्म के गुरु हैं, वे कई जन्मों से उन्हें जानते हैं तथा इस जन्म में भी बाबा से उनका सम्पर्क हुआ है। बाबा ने कई लोगों से वायदा भी किया कि अगले जन्म तथा अन्य जन्मों में भी बाबा उनके साथ रहेंगें। यदि कोई बाबा को गुरु–रूप में पाने का इच्छुक है तो वह बाबा को पा सकता है। इस गुरु–पूर्णिमा की पूजा को यदि हम अन्य दिनों में भी अपनी दिनचर्या का हिस्सा बना लें तो यह भी इस विषय में सफलता दिलाने में सहायक होगी। हमें अपनी पात्रता बढ़ानी है, तभी

हम साई के साथ जुड़ पाएँगे। यदि साई को गुरु–रूप में पाने की, हमारी हार्दिक इच्छा है तो हमें अपने–आपको साई–भक्त के रूप में उपयुक्त बनाना होगा।

'मच्छिता सत एत एम भवः' यह निर्देश श्री कृष्ण ने गीता में अर्जुन को दिया था। साई ने भी इस युग में यही संदेश दिया है। मनोविज्ञान के अनुसार यदि हम किसी व्यक्ति–विशेष पर या विचार–श्रंखला पर एकाग्र हो जाएँ तो हमारा मन भी उसी की तरह का हो जाता है। जितना हम साई के विषय में सोचेंगे, उतना ही हम साई से प्रेम करने लगेंगे, हमारे लिए साई से प्रेम करना आसान हो जाएगा और हम साईमय होते जाएँगे।

हमें सिद्धियाँ भी प्राप्त हो सकती हैं। यहाँ महत्वपूर्ण है साई का संरक्षण, शक्ति तथा उनका साया। अपने मन में भक्तों के उन अनुभवों को संजोए रखना है, जो बाबा की विशेषताओं की सदा पुष्टि करते हैं। यदि ये सब निरंतर स्मरण किया जाएगा तो हम निश्चय ही साईमय हो जाँएगें। साई हमसे प्रेम करने लगेंगे, और इस प्रकार यह आपसी प्रेम हमें परस्पर एक कर देगा।

वेणटस्थ साईश, त्योर भी दो ना विद्यते
त्योर एवं स्मरण नित्यम
तत् इश्तनम् लाभते नरह

इसका अर्थ है – साई को निरंतर स्मरण करना, उनके वेंकटेश रूप का निरंतर स्मरण करने के समान है। वे दिव्य गुण जो एक आत्मा में हैं, वे ही दूसरी में भी हैं। 'आत्माओं की एकरूपता हमारी अंतरात्मा में समाहित हो जाएँ और हम सब भी उनके समान हो जाएँ। – यही सार्थकता है एवं यही उचित भी है। गुरु–पूजा का–विशेषकर साई–पूजा का यही उद्देश्य भी है।

नरसिंहम् स्वामी

चतुर्थ गुरुपूर्णिमा–संदेश
15 जुलाई, 1954

इस वर्ष आषाढ़ पूर्णिमा 15 जुलाई 1954 को पड़ रही है। हिन्दू इसे गुरु पूर्णिमा या व्यासपूर्णिमा के नाम से हर जगह मनाते हैं। जिन लोगों को अपने गुरु से लगाव एवं गुरु पर पूर्ण श्रद्धा और विश्वास है, वे पूर्ण धार्मिक विधि–विधान द्वारा इस गुरु–शिष्य–पर्व को महत्व देते हैं, तथा शिष्य को इसका पूर्ण लाभ एवं फल प्राप्त होता है। अब प्रश्न उठता है कि आखिर गुरु–शिष्य का क्या रिश्ता है? सद्गुरु शिष्य के भीतर का अंधकार दूर करता है। अब प्रश्न पैदा होता है कि यह कैसा और कौन–सा अंधकार है? शिष्य यह समझता है कि वह एक निजी आत्मा है, वह अपने शरीर को अपना घर समझता है और इसके अलावा कुछ भी नहीं – ऐसा मानता है। किसी को भी यह विश्वास दिलाना सहज नहीं होता कि वह शरीर नहीं है, वह स्वयं ब्रह्म–रूप है; वह सर्वव्यापक परमात्मा का निजी अंश है। गुरु का कार्य है कि वह शिष्य को इस सत्य की अनुभूति कराए। यह शिष्य को उसके जीवन के उद्देश्य तक पहुँचा देगा। शिष्य को जिस शिक्षा की आवश्यकता होती है, गुरु प्रदान करता है, इसके बदले शिष्य आजीवन गुरु का आभारी बना रहता है। गुरु के स्वर्गस्थ हो जाने पर, गुरु का समाधि–दिवस, गुरु की शिक्षा एवं उनकी स्मृतियों को तरो–ताजा करने का विशेष अवसर होता है। सिद्धान्त है कि जीवित अवस्था में रहते हुए उत्साही भक्त को गुरु के व्यक्तित्व में डूबकर सर्वस्व समर्पण करना है। यदि किसी कारणवश यह कार्य पूर्ण रूप से न हो पाए और गुरु शरीर त्याग दे तो शिष्य को चाहिए कि वह अपना ध्यान और मन गुरु पर केन्द्रित करे। इस प्रकार उसे अपने उद्देश्य की प्राप्ति होगी। ध्यान द्वारा गुरु से एकात्मकता प्राप्त होती है, जिसे हम परमतत्व या परब्रह्म की प्राप्ति मानते हैं। वास्तव में शिष्य द्वारा हर समय गुरु में ध्यान या एकाग्रता सम्भव नहीं होती। यह कोई आसान कार्य नहीं है। गुरु का बारंबार स्मरण करना भी कुछ लोगों को कठिन लगता है। ऐसे लोगों के लिए गुरु–पूर्णिमा ईश्वरीय वरदान है। शिष्य को इस दिन अपनी पूर्ण श्रद्धा, उत्साह एवं प्रेम को गुरु के चरणों में अर्पित करना है। इस प्रक्रिया को आसान बनाने के लिए गुरु–पूर्णिमा के दिन धार्मिक विधि–विधान से दीक्षा, आदि का प्रावधान है। यह प्रक्रिया पितृश्राद्ध के समान है। साल के तीन सौ पैंसठ दिनों में से एक दिन पुत्र अपने पिता एवं पूर्वजों को श्रद्धापूर्वक याद करता है, धार्मिक रीति–रिवाजो द्वारा अपने पूर्वजों का ध्यान करता है तथा पूर्ण सम्मान स्नेह एवं श्रद्धा से भोजन, फल फूल, धन तथा वस्त्रों के दान द्वारा उन्हें सम्मानित करके अपनी प्रगति के लिए उनका आशीर्वाद प्राप्त करने की चेष्टा

करता है। ठीक इसी प्रकार गुरु–पूर्णिमा के दिन गुरु एवं उनके पूर्व गुरु, परम गुरु और सर्वश्रेष्ठ परमेश्वर को गुरु–रूप में आमंत्रित कर उन्हें सम्मानित करना चाहिए। उन्हें उत्तम वस्तुएँ – जैसे भोजन, फल, फूल, वस्त्र, एवं मान–सम्मान देना उनकी पूजा–अर्चना करने के उपरांत शिष्य उनका प्यार एवं आशीर्वाद प्राप्त करने की प्रतीक्षा करता है। गुरु शिष्य को जाते समय अपने उच्च उद्देश्यों को प्राप्त करने का आशीर्वाद देते हैं। इसका पूर्ण विवरण संत निरंकार के पूर्व भाग में दिया गया है। यहाँ पूर्ण विवरण देना सम्भव नहीं है। गुरु–पूजा और अर्चना करने के लिए किसी पंडित या पुजारी की सेवाएँ ली जा सकती हैं।

अब विधि–विधान द्वारा पूजा का जब प्रश्न उठता है तो साई–भक्तों के लिए वैधानिक पूजा अधिक महत्व नहीं रखती। बाबा का तरीका रूढ़ीवादी नहीं है। यहाँ यह जानना जरूरी है, परन्तु विषय की तह तक जाना भी आवश्यक है। गुरु–शिष्य का नाता तीव्र प्रेम एवं गुरु–शिष्य के मध्य पारस्परिक प्रेम का नाता है। बाबा की अपने गुरु के प्रति प्रेम की व्याख्या बाबा के चार्टर एंड सेंइग्स में की गई है, वह संत रत्नाकर द्वारा की गई व्याख्या से ज्यादा महत्वपूर्ण है। बाबा के चार्टर एंड सेइंग्स के अनुच्छेद 137,138,139, 140 एवं 175 उत्साही भक्तों को विशेष लाभ पहुँचाने में सहायक सिद्ध होंगे। भक्तों को चाहिए कि वे इस ग्रन्थ को अनेक बार पढ़ें और अपना ध्यान बाबा में लगाएँ। गुरु की शिक्षा को आत्मसात कर लेने पर ही जीवन का लक्ष्य प्राप्त होगा, जो कि भक्त को बाबा के समान बना देगा। इस ज्ञान का परिणाम है, बाबा से एकाग्रता एवं परमानंद की प्राप्ति। हर बार इस पूर्ण सद्ग्रंथ का अध्ययन करने के पश्चात् आपको बाबा की आकृति जैसे मूर्ति या चित्र पर अपना ध्यान केंद्रित कर, उनका चिंतन और मनन करना है, उनमें लीन होना है। जब आप अपने आप को भूल जाएँ तो समझ लीजिए कि यही वास्तविक पूजा है। गुरुपूर्णिमा के दिन भक्तों के साथ मिलजुल कर इसी विधि से एक साथ पूजा करनी चाहिए। इस अवसर पर बाबा की पुस्तकों का अध्ययन एवं श्रवण कर सकते हैं, विशेषतः बाबा पर नाटक आदि का मंचन भी कर सकते हैं।

बाबा के भक्तों को आज गुरुपूर्णिमा दिवस पर मेरा यह संदेश है कि वे युद्ध–स्तर पर संकल्प करें कि वे अपना ज्यादा–से–ज्यादा समय बाबा के लिए निकालेंगे। समय का हर पल बाबा के चित्र अथवा मूर्ति का ध्यान एवं मनन करने में लगायेंगे। बाबा के ग्रन्थों का ध्यान एवं श्रद्धा से अध्ययन करेंगे। एकांतिक ध्यान इन सब में श्रेष्ठ है। सामूहिक पूजा के उपरांत, भक्तों को चाहिए कि मौका पाकर अनुष्ठान के रूप में अपने गुरु का एकांतिक ध्यान करें। फिर वे अपने गुरु को पा सकेंगे। फिर गुरु और वे एक हो जाएँगे। गुरु पूर्णिमा

तो वर्ष में केवल एक बार आती है।, आप सब को पूर्ण श्रद्धा एवं संकल्प द्वारा अपने भीतर स्रोत संचय करना है–बाबा के विषय में पढ़कर, ध्यान एवं पूजापाठ द्वारा! ताकि इसे आगे बढ़ाने में गति एवं वेग मिले। आपके उत्साह का झंडा गुरु–पूर्णिमा के दूसरे या तीसरे दिन नीचे नहीं आना चाहिए। हर रोज आप अपने गुरु साई से सर्म्पक रखिए, उनके विषय में कुछ पढ़िए और जो पढ़ा, उस पर मनन करिए, तथा बाबा के चित्र पर ध्यान लगाइए। यह कार्य तब और आसान हो जाएगा, जब आप इसकी आदत बना लेंगे। आप जो करें, उसे बाबा से जोड़ते चलें। यदि आपको किसी वस्तु की आवश्यकता है तो आप बाबा का ध्यान करें और उनसे मदद की याचना करें। आप उनकी मदद अवश्य पा जाएँगे। बाबा आपकी चिंता करते हैं और आप पर निगाह रखते हैं। यह सत्य यदि आप पूर्ण मन–प्राणों से स्वीकार कर लें तो आपको कोई भय नहीं लगेगा। बाबा ने कहा था 'तुला कालजी, कजली, माला सारा कजली अबे' यानी 'तुम क्यों चिंतित हो? चिंता मुझ पर छोड़ दो'। यह वचन बाबा ने एच. एस. दीक्षित को दिया था और दीक्षित ने इन वचनों को आजीवन हर क्षण सत्य पाया। आप सब भी बाबा को अपनी मदद के लिए पुकारें और अनुभव करें कि बाबा आप के साथ हैं तथा आपकी मदद कर रहे हैं। आपके जीवन के वे क्षण जो भौतिक जगत के क्रिया–कलाप में व्यतीत होते हैं, वे भी साई चिंतन में लीन हो जाएँ। फिर सारा जीवन साई की देख–रेख एवं संरक्षण की सुखद छाँव से परिपूर्ण होगा। आपकी भौतिक एवं आध्यात्मिक आवश्यकताएँ वे पूर्ण करेंगे और अपने जीवन की सर्वोच्च अभिलाषा, सत्–चित् आनंद के परमानंद में आप विलीन हो जाएँगे।

मैं बाबा से प्रार्थना करता हूँ कि इस संदेश को सुनने और पढ़ने वाला, इसे अपने हृदय में आत्मसात् करे। बाबा उसे अपनी और खींचें और वह बाबा से पूर्ण लाभ उठा पाए, जो कि एक साई–भक्त को प्राप्त हो सकता है।

नरसिंहम् स्वामी

पाँचवा गुरुपूर्णिमा–संदेश
10 जुलाई, 1955

नए चाँद का सौंदर्य–वैभव धीरे–धीरे, दिन–प्रतिदिन बढ़ता है और वह प्रत्येक माह की पूर्णिमा को पूर्णता प्राप्त करता है। इस समय समस्त जीव–जन्तु एवं प्रकृति उसके उज्ज्वल प्रकाश एवं उल्लास–भरी प्रफुल्लता का आनन्द प्राप्त करते हैं। यहाँ चंद्रमा मन का प्रतीक है, मन की परिपूर्णता के लिए ही मानव–जीवन का अस्तित्व है और वह उन्हीं की सहायता से प्राप्त हो सकता है जो मानसिक शक्ति की परिपूर्णता तक स्वयं पहुँच चुके हों। व्यावहारिक रूप में मन ही आत्मा है। क्या हेमिलटन ने नहीं कहा था कि संसार में सबसे श्रेष्ठ जीव मानव ही है और मानव में श्रेष्ठ है उसका मन, बुद्धि, विचार और चिंतन। आत्मा की पूर्णता प्राप्त करना स्वयं के भरोसे सम्भव प्रतीत नहीं होता, हज़ार में एक व्यक्ति ही गुरु की सहायता के बिना पूर्णता प्राप्त करता है। गुरु के महत्व को हर धर्म में स्वीकारा गया है, जिसमें हिन्दू धर्म भी शामिल है। हर पूर्णिमा गुरु–पूजा का दिन है। साई बाबा की तरह अनेक संतों ने गुरुपूर्णिमा के दिन गुरु के पास जाने को महत्व दिया है, क्योंकि इस दिन महर्षि वेद व्यास ने ब्रह्म सूत्र लिखना प्रारम्भ किया था। गुरुपूर्णिमा से मानसून का आरंभ होता है, सम्पूर्ण भारत में इन दिनों हरियाली छा जाती है, पूरा भारत जंगल की तरह हरा–भरा लगने लगता है। इस समय यात्रा करना खतरे से खाली नहीं है। ज्ञानियों एवं संन्यासियों को शास्त्रों में इस समय यात्रा करना वर्जित है। उनके लिए सम्भव नहीं होता कि वे गिरे हुए पेड़ों तथा टूटे–फुटे रास्तों से होकर वर्षा–काल में भटकते हुए गाँव–गाँव पहुँचें। मानसून के दौरान मालाबार एवं पश्चिमी घाटों में निरंतर वर्षा के कारण लोगों को यात्रा न करने को कहा गया है। ऐसी ही समस्याएँ साधु–संतों एवं सन्यासियों को एक स्थान पर ठहरने को विवश करती हैं और कहा जाता है कि उन्हें वहाँ के निवासी जो भिक्षा दें उसी में इन महीनों में वे अपना गुजारा करें। कृतज्ञता ज्ञापित करना संतों का प्रमाणिक चिह्न है। दानदाताओं का ऋण उतारने के लिए संतों की उपस्थिति ही पर्याप्त है। संतों को दान दाताओं द्वारा दिया गया दान और अन्न ही उनके कर्म–भोग समाप्त करने के लिए श्रीमद् भागवत के अनुसार पर्याप्त है।

बंगले सर्वत्र भोगतरनः
दानःप्राग उतरास्तिभूनम्

दान दाताओं के पिछले और भविष्य में आने वाले बुरे कर्म ऋषियों और मुनियों को भोजन करवाने से समाप्त हो जाते हैं। स्वाभाविक रूप में साधु–संतों की हार्दिक अभिलाषा रहती है कि जो उनको सहारा देते हैं, वे उनकी मदद अवश्य करें। ऐसे गुरु आध्यात्मिक उत्कर्ष प्रदान करने तथा ऊँचा उठाने में सहायक बनने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। वे अपने अनदेखे प्रभाव से भी लोगों की मदद करते हैं। चतुर्मास का आरंभ गुरु–पूर्णिमा से होता है। आध्यात्मिक मानसिकता वाला व्यक्ति इसका, प्रारम्भ अपने गुरु की पूजा से करता है। शिरडी में सन् 1908 के आस–पास गुरु–पूर्णिमा की प्रथा आरंभ हुई थी। एक दिन बाबा ने दादा केलकर से कहा "क्या तुम जानते हो कि इस दिन गुरु के पास पहुँचना चाहिए? तुम पूजा का सामान ले आओ।" केलकर और उनके मित्र ने केलेण्डर की तरफ देखा और पाया कि वह दिन गुरुपूर्णिमा का ही दिन था। गुरुपूर्णिमा के दिन उन्होंने साई की पूजा गुरुदेव के रूप में की और यह परम्परा आज तक चली आ रही है – शिरडी में और जहाँ–जहाँ बाबा की पूजा होती है, सब जगह इस विशेष दिन ही गुरु–पूजा का केवल यही महत्त्व पर्याप्त नहीं है, हर सम्भव प्रयास की आवश्यकता है; ताकि यह समारोह सफलतापूर्वक सम्पन्न हो सके। गुरु–पूजा का इस दिन विशेष महत्त्व है। उत्साही भक्तों को चाहिए कि वे पूर्ण श्रद्धा–विश्वास और विधि–विधान द्वारा यह परम्परा निभाएँ। उनका उद्देश्य आध्यात्म के सर्वोच्च सोपान को पाना है। सुबह–सवेरे जल्दी उठकर स्नान करें, स्वयं को शुद्ध रखें, संसारी आकर्षणों से अपना ध्यान हटाएँ, फलाहार या संयमी भोजन करें, श्रद्धापूर्वक हर क्षण गुरु के विचार एवं ध्यान में संलग्न रहें एवं अपने आपको गुरु में लीन करने का प्रयास करें। हर प्रकार का पूजा–पाठ, ध्यान, मनन, स्त्रोत, कीर्तन, भजन आदि जिससे भक्ति बलवान होती है, उसका कठिन प्रयास सावधानी एवं ईमानदारी से करना है। ओछापन, छिछोरापन, फालतू गपशप तथा किसी भी प्रकार की बुरी लत या आदत से दूर रहना है। इन सबसे ऊपर ध्यान – साधना एकांत में या फिर साधु–संतों के सम्पर्क में अथवा उत्तम वातावरण में करनी है; जैसे गुरुदेव के संरक्षण में। उदाहरण के तौर पर, कम से कम 30 मिनट आप एक बार में अपने गुरु पर ध्यान लगाने की कोशिश करें। इस अवधि को बनाए रखें तथा समय के साथ इसे बढ़ाते जाएँ। ध्यान के अंत में तन्मयता स्थापित करें। ब्रह्म का ध्यान करने से आत्मा ब्रह्म स्वरूप हो जाती है। हम सब कुछ भी नहीं हैं, केवल अपने विचार ही हैं। जितना हम बुरे और बेतुके विचारों से दूर रहेंगे और अपनी विचार–शक्ति पर गौर करेंगे, उत्तम विचारों पर ध्यान देंगे तथा सर्वोत्तम विचार, जो केवल अपने सद्गुरु का ख्याल ही हो सकता है, उतना ही हमारे लिए अपने जीवन के ध्येय को पाना सम्भव हो जाएगा। फिर हम अपने गुरु का रूप बनते चले जाएँगे तथा पूर्ण परिर्वतन की प्रक्रिया द्वारा अपने गुरुदेव के समान ही हो जाएँगे। यही आधार भूत मत है संत तुकाराम की कहावत

का, कि संत अपने पवित्र उत्साही भक्तों को अपने जैसा ही बना लेते हैं। 'अपने सरीका करिवत् तलका' अर्थात संत अपने आशिकों को अपने जैसा ही बना लेते हैं। यही हमारी सर्वोच्च उपलब्धि है, जो हम पा सकते है। गुरुपूर्णिमा का दिन ही वह पुण्य दिवस है, जब हमें इस प्रण को दोबारा केवल याद ही नहीं करना है, वरन् हर तरह से उसे पूर्ण करना है। श्री साई हर क्षण हमारे पास उपस्थित हैं और हमें पूर्ण विश्वास है कि वह हमारी पुकार सुन रहे हैं।

नरसिंहम् स्वामी

छठा गुरुपूर्णिमा–संदेश
10 जुलाई, 1956

हिन्दुओं में प्राचीन प्रथा है – 'पूर्णिमा के दिन गुरुपूजा करना।' इस दिन चंद्रमा अपनी पूर्णता पर होता है। अतः गुरु द्वारा आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए हम सबका मन अत्यंत प्रसन्न एवं उत्साहित रहता है। अकसर गुरु भी अपने भक्तों को पूर्णिमा के दिन अपने पास आने को कहते हैं। साईबाबा ने एच. वी साठे को गुरु–पूर्णिमा के दिन पूजा की सामग्री लेकर आने को कहा था। गुरुपूर्णिमा के दिन का महत्व अन्य पूर्णिमाओं से कुछ अधिक है। इस दिन महर्षि व्यास ने ब्रह्मसूत्र की गौरवपूर्ण व्याख्या का आरंभ किया था, जिसके कारण मानव–जाति के पास आज विशेष धार्मिक–आध्यात्मिक प्रकाश है।

गुरु के पास विशेषतः आध्यात्मिक जिज्ञासा–हेतु जाना चाहिए, परन्तु किसी अन्य उद्देश्य से गुरु के पास जाने का निषेध नहीं है। साईबाबा की परम्परा या गुरु–परम्परा में केवल गुरु ही शिष्य का शरण–स्थल है। शिष्य की हर आवश्यकता–भौतिक और आध्यात्मिक, दोनों ही साधी जा सकती हैं। वास्तव में आध्यात्मिक आकर्षण का महत्व भौतिक आकांक्षाओं से ऊपर होना चाहिए, केवल भौतिक आकांक्षाओं को अपने मस्तिष्क पर हावी नहीं होने देना चाहिए। फिर भी कई बार भौतिक आवश्यकताओं की विवशता, शिष्य को गुरु–पूर्णिमा के दिन भी गुरु के पास जाने को विवश कर सकती है। अब शिष्य के गुरु के समीप जाने के प्रश्न को दो दृष्टि–बिंदुओं से देखा जा सकता है–
1. गुरु की दृष्टि से, 2. शिष्य की दुष्टि से।

'गुरु' शब्द का अर्थ बड़ा व्यापक है। गुरु स्कूल–कॉलेज में पढ़ाने वाला शिक्षक भी हो सकता है, जबकि कालेजों में गुरुओं का अपने सैकड़ो शिष्यों से व्यक्तिगत संवेदनशील सम्पर्क कम ही देखने को मिलता है। हमारा गुरु कहने का अभिप्राय प्राचीन ऐतिहासिक गुरुओं से है, जिनके आश्रम में शिष्य जाकर रहते और शिक्षा ग्रहण करते थे। वे गुरु के साथ काम–काज करते और काफी समीप से गुरु एवं उनसे सम्बंधित लोगों के साथ रहते थे। गुरु की पत्नी शिष्य की माँ–स्वरूप होती थी। शिष्य छोटे होते थे, जैसे कि आज के युग में लोग बच्चों को बोर्डिंग स्कूलों में भर्ती करवा देते हैं। इसी प्रकार छोटी–सी आयु में शिष्य को गुरु के पास छोड़ दिया जाता था। शिष्य के विकास के लिए यह बहुत लाभप्रद होता था। बड़ी आयु में गुरु के सम्पर्क में आने से अनेक प्रकार की परेशानियाँ होतीं हैं।

युवा अवस्था में पहुँचने तक आदतें और मानसिकता परिपक्व हो जाती हैं। नए–नए उत्तम आदर्शों, अनुकरणीय विचारों एवं मान्यताओं का प्रायः कोई प्रभाव नहीं रह जाता। पुरानी आदतें दृढ़, परिपक्व एवं शक्तिशाली हो जाती हैं, जिन्हें तोड़ा नहीं जा सकता। पुरानी आदतों को प्रायः 'प्रकृति' कहा जाता है। आदत ही स्वभाव बन जाती है। श्री कृष्ण भगवान ने गीता में कहा है–

सदंश चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञानवानीय
प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति–।।

अर्थात् सभी प्राणी अपनी प्रकृति के वश में होते हैं। ज्ञानवान भी अपनी प्रकृति के अनुसार ही कर्म करते हैं। किसी के हठ के विपरीत कैसे जाया जा सकता है? जिनके अंदर उच्च विकास की तीव्र इच्छा है, उन्हें चाहिए कि वे छोटे साधकों को किसी योग्य शिक्षक या मार्ग–दर्शक के निर्देशन में तुरंत डाल दें। अंग्रेजी की एक कहावत है 'Bend the Twig and Bend the Tree' अर्थात यदि हम पेड़ को छुटपन से ही मोड़ देंगे तो इसका निशान अवश्य रह जाएगा। इसी प्रकार बाँस आदि पेड़ो को मोड़ा जाता है। इसी सिद्धांत का प्रयोग करते हुए हमें छोटी आयु में ही गुरु के पास जाना चाहिए। यह सत्य सब लोगों को शीघ्र ही समझ में नहीं आ सकता, और न ही लोग आसानी से गुरु के पास पहुँच पाते हैं, तथा न ही वे गुरु को समर्पित हो पाते हैं। परिस्थितयाँ ही कई बार गुरु के पास कई लोगों को पहुँचने और रहने नहीं देतीं। और तो और गुरु भी सभी लोगों को स्वीकार नहीं कर पाते कि वे लोग उनके साथ रहें। गुरु शिष्य को चुन सकते हैं, वे ही अपने शिष्यों का चुनाव करते हैं, जिनसे उन्हें आगे बढ़ने की आशा–अपेक्षाएँ होती हैं। आज के युग में शिष्यों को चुनने और उनको प्रशिक्षण देने के अनेक तरीके देखे जा सकते हैं, जिन्हें हम सिद्धांत के रूप में मान्यता नहीं दे सकते। इस चुनाव का परिणाम पक्षपातपूर्ण, अनुपयुक्त तथा असंगत और अनुचित भी हो सकता है। जैसे कि आज के युग में हजारों लोग मेड़िकल तथा इंजीनियरिंग की शिक्षा के लिए फार्म भरते हैं, और बहुत से लोग वहाँ शिक्षा ग्रहण करने के लिए चुने नहीं जाते। यहाँ चुनाव का आधारभूत कारण जाति, अमीरी या अन्य व्यक्तिगत कदापि नहीं है, यहाँ तो गिनती निश्चित है। बस उतने ही उम्मीदवार लिए जाएँगें। पुराने जमाने में शिष्य ही गुरु के घर पर श्रमिक कार्य करते थे, आर्थिक आवश्यकताएँ भी सीमित थीं, सैकड़ों शिष्य आश्रम या शैक्षणिक संस्थाओं में प्रवेश पा लेते थे। तैतीय उपनिषद के अनुसार '**ए मायंतु ब्रह्मचर्या स्वतः। –**
A Mayantu Brahinaeharinah Svah अर्थात मेरे आश्रम में नदी की बाढ़ की भांति शिष्य आएँ और शिक्षा ग्रहण करें। जितना प्रचलित और स्थायी संस्थान होगा उतना ही अधि

ाक वह आध्यात्मिक उपकार कर सकता है। व्यक्तिगत सम्पर्क द्वारा जहाँ मार्गदर्शन कराना होता है, वहाँ शिष्यों की अधिक संख्या उपयुक्त नहीं मानी जा सकती, परन्तु यह भी आवश्यक नहीं है। ऐसे कई गुरु के बाद गुरु होते हैं जो अनेक शिष्यों को भली प्रकार सँभाल सकते हैं, उन्हीं के अधिनस्त प्रशिक्षित साधकों के सहयोग द्वारा, जब झुंड के झुंड भक्त उनके पास आध्यात्मिक उद्देश्य लेकर आते हैं, ऐसी परिस्थितियों में भी सब लोगों को उचित आध्यात्मिक मार्गदर्शन मिलने की सम्भावना बनी रहती है। परन्तु आधारभूत सत्य यह है कि आध्यात्मिक उद्देश्य से बहुत कम शिष्य ही गुरु के पास पहुँचते हैं। अध्यात्म के मार्ग पर जिस भारी वैराग्य और कुर्बानी की आवश्यकता होती है, उसकी यहाँ अकसर कमी पाई जाती है। साईबाबा जैसे उच्च और श्रेष्ठ गुरुओं के सामने इस प्रकार की कोई कठिनाई नहीं आती, क्योंकि इस प्रकार के सद्गुरु स्वयं तय करते हैं कि उनके पास शिष्य कब और कैसे पहुँचेगा और वह उसके साथ हर परिस्थिति में कैसे निभायेंगे।

आज प्रचुर मात्रा में धार्मिक गुरु हैं; परंतु उनका आकलन हम साईबाबा को लेकर नहीं कर सकते। कुछ धार्मिक गुरुओं के पास जाने पर भक्तों को कटु अनुभव भी होते आए हैं। वे वायदे तो बहुत करते है; परंतु उनके पास भक्तों को संरक्षण एवं आध्यात्मिक मार्ग पर आगे बढ़ाने के लिए कुछ नहीं होता। गुरु होने के लिए कठिन वैराग्य की आवश्यकता होती है, ताकि वह शिष्य की आज्ञापालन करने की क्षमता का व्यक्तिगत या अनुचित लाभ न उठा सके। शिष्य प्रायः अंधा होता है और गुरु की हर आज्ञा का पालन करने लगता है, क्योंकि वह गुरु को आदेश देने में सक्षम समझता है। भाग्यवश अक्षम गुरु ही शिष्यों के विनाश या अभिशाप का कारण सिद्ध हुए हैं। आध्यात्मिक समुदायों में इस कटु सत्य की शोचनीय चर्चाएँ प्रायः होती रहती हैं।

अकसर किसी प्रसिद्ध व्यक्ति को उपयुक्त गुरु मान लिया जाता है। कुछ प्रसिद्धि पाने के बाद यह पाया जाता है कि सोने की मूर्ति के पैर तो मिट्टी के हैं, अतएव वह शिष्यों को उचित मार्गदर्शन नहीं दे सकता। भाग्यवश बाबा के साथ ऐसा नहीं है। मुख्य तथ्य यह है कि बाबा अपने आप को गुरु घोषित नहीं करते। वे अपनी पहचान करवाने,या अपने को गुरु घोषित करवाने के इच्छुक नहीं हैं। वे अपने सद्गुणों को गुप्त ही रखने की प्रथा का पालन करते हैं, जैसा कि उच्च आत्माएँ करती हैं।

बुदनी बालक क्रंड़ती,
कुस्केल जड़वत चरेत।
वदेत उनमत्वत विद्वान

गोचरम व्यागमह चरेत।

इसका अर्थ है – 'ज्ञानी व्यक्ति को एक छोटे बालक की भाँति व्यवहार करना चाहिए। अत्यंत दक्ष व्यक्ति अपनी दक्षता गुप्त रखता है; विद्वान पुरूष जब बात करते हैं, तब वे सनकी, उन्मत्त या पागल प्रतीत होते हैं, और परम ज्ञानी जो सब शास्त्रों में पारंगत हों, वे चौतरफा पागल की तरह व्यवहार करते हैं। त्रिवनमल्लई के श्री शेषाद्री स्वामी ने बलमल्लई स्वामी को यह सलाह दी – 'अपनी भाव–भंगिमा सनकी और पागल सरीखी रखो, फिर कोई आप को परेशान नहीं करेगा और सब आपको अकेले छोड़ देंगे।' साईबाबा कई दशक तक इसी प्रकार अपने को सनकी कहलाते रहे, ताकि उनके नजदीक रहने वाले भी उन्हें पागल समझने लगें। बाबा के आचरण को समीप से देखते हुए जी. जी. नारके ने भी एक अवसर पर सोचा कि बाबा तो अवश्य ही पागल हैं। नारके जब बाबा के पास पहुँचे तो बाबा ने स्वयं स्पष्ट किया, "नारके! मैं पागल नहीं हूँ"। जब बाबा ने स्वयं ही नारके के हृदय की बात व्यक्त कर दी तो नारके स्तब्ध रह गए और उनके मुख से एक शब्द भी नहीं निकला। इस वृतांत ने नारके को स्पष्ट कर दिया कि बाबा बिना किसी के बताए स्वयं अन्तर्मन की बात जान सकते हैं और वे सनकीपन का मात्र दिखावा करते हैं, उन्हें अन्तर्ज्ञान है। नारके को यकीन हो गया कि बाबा स्वयं एक सिद्ध पुरूष, सद्गुरु एवं आत्मज्ञानी हैं तथा पागल होने का ढ़ोंग करते हैं। इस प्रकार पागल होने का नाटक करने की सलाह अधिकतर धर्मगुरुओं को नहीं दी जा सकती क्योंकि उनके मानसम्मान को ठेस पहुँचेगी, जिसके पीछे वे भागते नज़र आते हैं। केवल बाबा जैसी महान आत्माएँ, जिन्हें अपना मान–सम्मान और अपमान एक समान लगता है, जिन्हें अपनी वाहवाही या प्रशंसा सुनने की उत्सुकता नहीं होती, वही सनकीपन का नाटक कर सकते हैं। अब हम अपने मूल विषय पर आते हैं। साईबाबा सरीखे सद्गुरु अकसर अपनी वास्तविकता अधिकतर लोगों के सामने प्रकट नहीं होने देते। इसी कारण कुछ लोग इनके पास निम्न उद्देश्यों के लिए जाते हैं, फिर भी यदि कोई योग्य व्यक्ति साई बाबा सरीखे सद्गुरु के पास आता है तो वह इनकी वास्तविकता पहचान लेते हैं। सद्गुरु ऐसे ही व्यक्तियों को अपनी तरफ आकर्षित करते हैं, जो उनके प्रभाव में आकर अपना आध्यात्मिक उत्थान कर सकें।

अब अन्ना साहब दाभोलकर का उदाहरण हम देखते हैं, जब उनके मित्र श्री एच. एस. दीक्षित ने उन्हें बाबा से मिलने को कहा। दाभोलकर यह तय नहीं कर पा रहे थे कि उन्हें गुरु की आवश्यकता है अथवा नहीं। दाभोलकर सोचते थे कि यदि गुरु एक बालक को मृत्यु के मुहँ से नहीं बचा सकता तो गुरु का क्या उपयोग है? वह गुरु कहलाने लायक

है या नहीं? इस प्रकार के बेतुके विचार और धारणाएँ अकसर लोगों के दिमाग में रहते हैं, जब वे गुरु के पास पहुँचते हैं। बाबा ने दाभोलकर को इस प्रकार के विचारों के लिए समझाया, उन्हें अपनी ओर आकर्षित किया और उनकी गलत धारणा दूर की। चंदोलकर के दबाव के कारण बाबा ने दाभोलकर को अपनी तरफ आकर्षित किया। एक मुसलमान ने दाभोलकर को शिरडी पहुँचने का उचित मार्ग बताया। बाबा ने स्वयं दाभोलकर के दिमाग में विचारों की उथल–पुथल को प्रकट कर दिया, ताकि दाभोलकर को यकीन हो जाए कि बाबा सर्वत्र मौजूद हैं। बाबा ने दाभोलकर के मित्र दीक्षित से प्रश्न किया कि 'दाभोलकर तुम्हें पहले मिलने पर क्या कह रहा था?

"बाबा! यह हेमाडपन्त तुम्हें क्या कह रहा था?" – सब जानते हुए यह सवाल किया? दीक्षित ने उत्तर दिया, 'बाबा आप तो स्वयं सब जानते हैं, इस प्रकार बाबा ने दाभोलकर का मानसिक उपचार कर दाभोलकर को हत्प्रभ कर दिया कि वे त्रिकालज्ञ एवं सर्वत्र मौजूद हैं; दूर–दूर तक क्या हो रहा है, बाबा सब जानते हैं। दाभोलकर ने बाबा को गुरु स्वीकार कर लिया। बाबा ने दीक्षित एवं उसके मित्रों को उत्तर देते हुए दाभोलकर को गुरु की आवश्यकता का ज्ञान करा दिया। दीक्षित एवं उसके मित्रों ने बाबा से आध्यात्मिक उत्थान का रास्ता पूछा।

बाबा ने उत्तर दिया 'आध्यात्मिक उत्थान का मार्ग दुर्गम है; उस पर चलना कठिन है, इस रास्ते में भयानक खतरे हैं'। दीक्षित ने प्रश्न किया, 'यदि मार्गदर्शक साथ हो तो'? बाबा ने उत्तर दिया यदि मार्ग–दर्शक साथ हो तो रास्ते के खतरे दूर हो जाते हैं।

बाबा ने दाभोलकर को गुरु–भगवान की आवश्यकता से अवगत कराते हुए आत्म–समर्पण करा लिया, और दाभोलकर बाबा के श्रेष्ठ भक्तों में गिने जाने लगे।

एक राज्य के दीवान श्री एन. ए. सहस्रबुद्धे ने दीक्षित को लिखा कि उन्होंने अनेक लोगों को गुरु मानने की कोशिश की, परन्तु कामयाब नहीं हुए। फिर उन्होंने गुरु को ढूँढने की इच्छा छोड़ दी। तभी अचानक सद्गुरु साईनाथ ने उन्हें अपने चरणों में खींच लिया। सामान्य जन का दाभोलकर और सहस्त्रबुद्धे की तरह सौभाग्यशाली होना आवश्यक नहीं है, जिससे कि गुरु उन्हें अपने चरणों में स्थान दे। हमें अकसर शिकायत सुनने को मिलती है कि आजकल गुरु नहीं मिलते। सच तो यह है कि सद्गुरु तो हैं; परंतु जो शिष्य बनना चाहते हैं, उनमें शिष्य बनने की योग्यता नहीं है। जब तक शिष्य की आत्मा में विनम्रता,

आवेगहीनता एवं गम्भीरता का उदय नहीं होता, तब तक वह गुरु के पास पहुँचने लायक ही नहीं होता। गुरु को एक राजा मान, शिष्य को भिखारी की हैसियत से गुरु के पास जाना चाहिए। 'सभी मनुष्य एक समान हैं' का दार्शनिक विचार, यह अनुभूति कि मैं अपने आप को इस स्थिति में क्यों डालूँ, अथवा 'मैं' का विचार एक व्यक्ति को शिष्य बनने के लिए अनुपयुक्त कर देता है। इसी कारण बचपन में ही गुरु का सान्निध्य पा लेना चाहिए, तब तक व्यर्थ स्वयं पर अभिमान, मद या अहंकार का अधिक विकास नहीं हो पाता।

आज इस गुरु–पूर्णिमा के दिन यदि किसी पाठक को गुरु पाने की अभिलाषा हो और वह साई बाबा को गुरु के रूप में पाना चाहता हो, तो उसे हम यह सलाह या संदेश देते हैं कि पहले अपने आप को शिष्य के रूप में तैयार करे, एक महान सद्गुरु के शिष्य के रूप में तैयार करे। गुरु को आपसे कुछ पाने की इच्छा नहीं होती। आप गुरु के पास जाते हैं, तो आप बहुत–कुछ पा जाते हैं। इस महासत्य को आत्मसात करने के पश्चात् ही आप में विनम्रता आएगी और आप गुरु के पास श्रद्धा, स्नेह एवं भक्ति–भाव द्वारा जा पाएँगे। इसके लिए आपको मानसिक तैयारी करनी होगी। बाबा के विषय में पढ़कर, भक्तों से मिलकर, उनके अनुभव सुनें और बाबा के विषय में सही धारणा बनाएँ। आज सैकड़ों लोग अपने को बाबा का भक्त कहलाते हैं, परन्तु उनमें से शायद पाँच प्रतिशत लोग यह नहीं समझते कि बाबा समर्थ सद्गुरु हैं; वे उच्च कोटि के गुरु हैं तथा उनके पास असीम शक्तियाँ हैं, और वे उनका प्रयोग केवल उन्हीं लोगों के लिए करते हैं जो उनके पास जाते हैं।

सन्तों महन्तों निवस्न्ती संतः
वसन्ततः लोः हितम् चिंतह्
तिरह स्वयम विमः भावः अम्बम जनहः
अवितुना अन्ययि तिरयन्तह

महान् सद्गुरु का जो परिचय 'विवेकचूड़ामणि' में दिया गया है, वह इस प्रकार है– वे महान आत्माएँ नित्य परमानंद में लीन रहती हैं। 'वे वसंत ऋतु की तरह अपना आशीर्वाद जनमानस पर बिखेर कर उन्हें आनन्दित करती हैं। वे स्वयं तो इस भयानक मृत्युलोक रूपी भवसागर को पार कर चुकी हैं, उन्हें अपनी दयालुता का कोई लाभ मिलने वाला नहीं है, ऐसी उच्च आत्माएँ अनेक लोगों को इस भवसागर से पार उतार सकती हैं और उतार भी देती हैं। यदि कोई पाठक ऐसे सद्गुरु को ढूँढने का इच्छुक है तो यह संदेश उसी के लिए है। हम घोषणा करते हैं कि बाबा आज महासमाधि के बाद भी जीवित हैं और

जो लोग आज हाड़मांस के शरीर में भी अपने को गुरु कहते हैं और कहलाने के इच्छुक हैं, उनसे ज्यादा जीवन्त हैं और बाबा अत्यंत शक्तिशाली भी हैं। वे उन लोगों के मन और मस्तिष्क में आंतरिक परिर्वतन ला सकते हैं, जो उनके पास जाना चाहते हों। बाबा वह सब कर सकते हैं, जिससे शिष्य का भला हो। बाबा को जब हम गुरु–रूप में मानते हैं तो उनकी स्थिति आज के युग के आचार्यों एवं धर्म–गुरुओं से भिन्न लगती है। आज जो लोग अपने को गुरु के दर्जे पर पहुँचा हुआ मानते हैं, वे कदाचित ही अपने शिष्यों का कुछ भला कर पाएँ; परंतु जब बाबा किसी शिष्य का पूर्ण जिम्मा, लेते हैं तो वह शिष्य बाबा का गोद–लिया बालक बन जाता है। बाबा उसको पूर्ण संरक्षण देते हैं; माता–पिता की तरह उस पर कृपा–दृष्टि रखते हैं। बाबा की मातृसुलभ कृपा–दृष्टि साधारण माँ–बाप के संरक्षण से हज़ार गुणा अधिक शक्तिशाली है। जो कार्य साधारण लोगों के लिए मुश्किल या असम्भव है, उसे वे अपने गोद–लिए बालकों से करवाते है। इस महासत्य का अनुभव हजारों लोगों को सन् 1918 में बाबा की महासमाधि के उपरान्त हुआ है। **'साई लीला'** एवं **'साई सुधा'** पत्रिका के पन्ने बाबा की यश–गाथाओं से भरे हैं एवं इस महासत्य की व्यक्तिगत पुष्टि करते है। जो लोग बाबा के साथ अपना नाता जोड़ना चाहते हैं, उनके लिए यह संदेश है कि वे अपने आप में विनम्रता, श्रद्धा एवं स्नेह का विकास करें, तथा बाबा के नजदीक पहुँचने का प्रयास स्वयं प्रारम्भ करें। आज आप सब इसी क्षण अपने आप को बाबा से जोड़ने का प्रण करें।

बाबा की अनुकम्पा से आप सफल होंगे तथा बाबा की अनुकम्पा पाने के लिए आप सक्षम हो जाएँगे, जो कि अन्य सभी अनुकम्पाओं से श्रेष्ठ है और उस अनुकम्पा में सब–कुछ समाहित है, जिसकी कि आप कामना कर सकते है।

नरसिंहम् स्वामी

शिरडी के साई बाबा के अमृत–वचन

1. आनन्द मग्न रहने का रहस्य – परमात्मा की सेवा में समर्पण है।
2. संतोष ही सुख–शांति की कुंजी है।
3. समस्त प्राणियों में ईश्वर के दर्शन करें तथा सबसे प्रेमपूर्ण व्यवहार करें।
4. प्रभु का भाव–तत्व आनन्द है। उनके चरण–कमलों पर समर्पित होकर आप भी परमानंद का अनुभव कर सकते हैं।
5. सच्ची भक्ति का अर्थ है ईश्वर के प्रति अपनी हस्ती को मिटा देने वाला गहरा प्रेम और विश्वास!
6. प्रभु अथवा गुरु को अपने सब कर्मों की आहूति दे–देना ही पूर्ण भक्ति का तत्व–मंत्र है।
7. भक्ति–रहित ज्ञान थोथा और अपूर्ण है।
8. मन, वचन और कर्म द्वारा किसी को भी दुःख पहुचाना पाप है और इसके विपरीत आचरण पुण्य है।
9. आगन्तकों का स्वागत करने, प्यासे को पानी पिलाने, वस्त्रहीन को वस्त्र तथा असमर्थ को अपने घर पर शरण देने से श्री हरि निश्चय ही आपसे प्रसन्न होंगे।